PUNJABI UNIVERSITY PATIALA

एम. ए. (हिन्दी) भाग-प्रथम

पेपर : दूसरा

सैमेस्टर : I

हिन्दी भाषा : उद्भव और विकास

एकांश संख्या : 2

डिस्टेंस एजुकेशन विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

(सर्वाधिकार सुरक्षित)

विषय-सूची

एकांश संख्या : 2

पाठ संख्या : 2.1	हिन्दी शब्द संरचना (उपसर्ग, प्रत्यय, समास, लिंग, वचन, कारक)
पाठ संख्या : 2.2	हिन्दी के संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया रूप
पाठ संख्या : 2.3	हिन्दी वाक्य, पदक्रम और अन्विति और हिन्दी की संवैधानिक स्थिति, मानकीकरण
पाठ संख्या : 2.4	देवनागरी लिपि

नोट : विद्यार्थी सिलेबस विभाग की वैबसाईट www.dccpbi.com से डाउनलोड करें।

पाठ संख्या : 2.1

हिन्दी शब्द संरचना (उपसर्ग, प्रत्यय, समास, लिंग, वचन, कारक)

जो शब्दांश किसी शब्द से पहले लगकर उसमें अर्थ–परिवर्तन लाते हैं उन्हें उपसर्ग कहते हैं। यह ऐसे शब्द हैं जिनका स्वतंत्र रूप में प्रयोग नहीं है क्योंकि इनका पृथक् से कोई विशेष महत्व नहीं होता है। हिन्दी भाषा शास्त्रियों ने 'कम', 'खुश', 'हर', 'गैर', 'भर' आदि कई शब्दों को भी उपसर्ग मान लिया है जबकि यह स्वतंत्र शब्द हैं जैसे राम खुश है, उसके पास ज्यादा पैसे हैं और मेरे पास कम आदि तथा इनके योग से बनने वाले सामासिक शब्द खुशबू, कमजो, गैरहाजिर आदि हैं परन्तु यदि इन शब्दों को उपसर्ग मान लिया जाए तो सामासिक शब्द और उपसर्ग से बने शब्दों के मध्य रेखा खींचना एक असंभव कार्य होगा। इसीलिए केवल ऐसे शब्दों को ही उपसर्ग मानना होगा जोकि स्वतंत्र रूप से प्रयोग में नहीं आते, जैसे अ, आ, सु, कु आदि। यदि उपसर्ग के इतिहास पर ध्यान दिया जाए तो ज्ञात होता है कि आरम्भ में यह स्वतंत्र शब्द थे तथा इनका अपना अर्थ था परन्तु कालांतर में इनकी स्वतंत्रता पूर्णतः समाप्त हो गई और ये केवल मूल शब्द से सम्बद्ध होकर ही प्रयोग होने लगे। संस्कृत में इनकी संख्या 22 (बाईस) मानी गई है जबकि पालिप्राकृत–अपभ्रंश में तीस से ऊपर स्वीकार की गई है। वर्तमान में हिन्दी में इनकी संख्या में और भी बढ़ोतरी हुई है जिसका एक कारण इसमें भिन्न–भिन्न स्रोतों से विकसित होना भी है। इस दृष्टि से उपसर्ग तीन प्रकार के हैं – (1) तत्सम उपसर्ग। (2) तद्भव उपसर्ग (3) विदेशी उपसर्ग।

(1) **तत्सम उपसर्ग** : हिन्दी में प्रयोग किए जाने वाले सभी उपसर्गों का उद्गम संस्कृत से हुआ। संस्कृत में 22 उपसर्ग हैं। ये इस प्रकार हैं :–

क्र. सं.	उपसर्ग	अर्थ	शब्द रूप
1.	अति	अधिक, ऊपर, उस पार उल्लंघन	अत्याचार, अतिशय, अतिकाल, अतिदृष्टि
2.	अधि	ऊपर, स्थान में श्रेष्ठ, अधिक	अधिकरण, अधिकार, अधिपति, अधिकभार।
3.	अभि	सामने, अधिक, ओर	अभिनय, अभिलाषा, अभिसार।
4.	अनु	पीछे, समान, साथ	अनुक्रम, अनुज, अनुशासन, अनुस्वार, अनुरूप
5.	अप	बुरा, हीन, अभाव, दूर, उल्टा	अपकीर्ति, अपयश, अपभ्रंश, अपमान।
6.	अव	नीचे, हीन, अभाव, बुरा	अवगत, अवनति, अवस्था, अवगुण।
7.	उप	निकट, गौण, सदृश, सहायक, छोटा	उपहार, उपकार, उपदेश, उपक्रम, उपभाषा।

8.	उत्	ऊपर, ऊँचा, श्रेष्ठ	उत्कर्ष, उत्तम, उत्पीड़न, उत्पन्न।
9.	दुर्	बुरा, दुष्ट, कठिन	दुराचार, दुराग्रह, दुर्बल, दुर्घटना।
10.	निर्	बाहर, रहित, निषेध, दूर, नहीं	निर्वाह, निर्दोष, निर्णय, निर्बल, निर्मल
11.	निस्	बिना, बाहर	निस्संदेह,
12.	परा	पीछे, अनादर, नाश	पराजय, पराक्रम, परामर्श, परास्त।
13.	परि	चारों ओर, आस–पास	परिजन, परिचर्चा, परिवहन, परिभ्रमण।
14.	प्रति	वापस, ओर, तरफ	प्रतिकूल, प्रतिवादी, प्रत्यक्ष।
15.	वि	भिन्न, विशेष, अभाव	विकल, विकास, विज्ञान, विशुद्ध, वियोग।
16.	कु	बुरा	कुकर्म, कुख्यात, कुदृष्टि, कुरूप, कुदिन।
17.	सं	सम्यक, अच्छा साथ	संकल्प, संग्रह, संगम।
18.	स	सहित, साथ	सरस, सजग, सफल, सजीव, सकुशल।
19.	सु	अधिक, साथ, सरल, अच्छा	सुकर्म, सुगम, सुशिक्षित, सुजैल, सुगंध।
20.	नि	भीतर, बाहर, नीचे, समूह, आदेश, समीप	निदर्शन, निबंध, निकुंज, निर्भय, निर्दोष
21.	प्र	अधिक, आगे	प्रमाद, प्रकाश प्रख्यात।
22.	आ	तक, ओर, समेत, कम	आकर्षण, आमरण, आहार, आचरण, आगमन, आजन्म, आजानु।

(2) **तद्भव उपसर्ग** : तद्भव उपसर्ग ऐसे शब्द हैं जिनका विकास संस्कृत उपसर्गों या संस्कृत अव्यय से हुआ है। ये इस प्रकार हैंः–

क्र. सं.	**उपसर्ग**	**अर्थ**	**शब्द रूप**
1.	अन्	अभाव, निषेध, अचेत, हीनता	अनमोल, अनमेल, अनचाहा, अनायास, अनपढ़।
2.	उन	एक कम, एक नहीं	उन्नीस, उन्तीस, उन्तालीस, उनचास, उनसठ।
3.	बिन	निषेध, अभाव	बिनदेखा, बिनजाने, बिनमाने।
4.	अध	आधा	अधकच्चा, अधमरा।
5.	भर	पूरा, ठीक	भरपेट, भरपूर, भरमार, भरकोस।
6.	औ	हीन, निषेध, नीचे, दूर	औगुन, औघट, औसर, औथर, औचड़।
7.	नि	निषेध, अभाव, रहित	निहत्था, निडर, निकम्मा, निधड़क।
8.	दुः	बुरा, हीन	दुकाल, दुर्बल, दुष्कर्म।
9.	उ	ऊपर, ऊँचा	उनींदा, उथला, उभरना, उतरना।

10.	क	–	यह केवल 'कपूत' में आता है।
11.	पर	दूसरी पीढ़ी का	परपोता, परदादा, परनाना।
12.	स	अच्छा	सपूत।

(3) **विदेशी उपसर्ग** : यह ऐसे उपसर्ग है जोकि अरबी, फारसी और अंग्रेजी से आये हैं।

क्र. सं.	**उपसर्ग**	**अर्थ**	**शब्द रूप**
1.	अल	निश्चत	अलमस्त, अलबत्ता।
2.	दर	में	दरकार, दरखास्त, दरकिनार, दरअसल, दरहकीकत।
3.	ब	ओर से, अनुसार, के साथ	बदौलत, बदस्तूर, बखूबी, बनाम, बतौर
4.	बा	साथ, से	बाकायदा, बावजूद।
5.	बे	बिना, रहित	बेरहम, बेचारा, बेवकूफ, बेईमान, बेतुका।
6.	ला	अभाव, नहीं, रहित	लापरवाह, लाइलाज, लाचार, लावारिस, लापता।
7.	हम	आपस में, साथ, बराबर	हमदर्द, हमउम्र, हमदम, हमसफर।
8.	ऐन	ठीक, पूरा	ऐनवक्त, ऐनजवानी।
9.	फी	प्रत्येक	फीसैकड़ा, फीआदमी।
10.	बिल	साथ	बिलमुक्ता, बिल्कुल।
11.	बद	बुरा	बदनाम, बदबू, बदहजमी, बदमाश।
12.	ना	अभाव	नादान, नापसंद, नाराज, नामुमकिन।
13.	वाइस	उप, नायब, छोटा	वाइस कैप्टन, वाइस चेयरमैन, वाइस प्रेसिडेंट, वाइस प्रिंसिपल।
14.	सब	उप, अधीन, भीतर, सह	सब रजिस्ट्रार, सब ऑफिस, सब इंस्पेक्टर, सब कमेटी।
15.	हेड	प्रधान, प्रमुख	हेडकांस्टेबिल, हेडमिस्ट्रेस, हेडऑफिस।

ऊपर कुछ उपसर्ग अनके अर्थ और शब्द रूप के साथ दर्शाये गये निःसंदेह भाषा के विकास के साथ–साथ समयानुसार इनकी संख्या में निरंतर बढ़ोतरी हुई है। उपसर्ग की भांति प्रयोग होने वाले कुछ अव्यय भी हैं जैसे :–

का/कु = कापुरूष/कुपुत्र

चिर = चिरकाल, चिरायु

सह = सहकर्मी, सहचर

अ/अन = अनीति/अनन्त

अंतर = अंतर्ध्यान आदि।

प्रत्यय

यह भाषा के बहुत छोटे खंड होते हैं, जिनका अपना अर्थ भी निकलता है, ये मूल शब्द के अंत में जुड़ने पर नए शब्द का निर्माण करते हैं और शब्द में विशेषता लाते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो जो शब्दांश अन्य शब्दों के या धातुओं के अंत में लगकर नए शब्दों का निर्माण करते हैं और शब्द के अर्थ को भी परिवर्तित करते हैं उन्हें प्रत्यय कहते हैं। भोलानाथ तिवारी के अनुसार 'प्रत्यय ध्वनि अथवा ध्वनि समूह की वह भाषिक इकाई है जिसे किसी शब्द अथवा धातु के अंत में जोड़कर शब्द अथवा रूप की रचना की जाती है।' प्रत्यय–प्रयोग की परंपरा हिंदी से पूर्व संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश में स्पष्ट देखी जा सकती है। समयानुसार कुछ पुराने प्रत्यय गौण अथवा लुप्त होने लगे तथा नए विकसित होते जा रहे हैं। वास्तव में प्रत्यय शब्द का निर्माण दो शब्दों – प्रति + अय से हुआ है। प्रति का तात्पर्य – साथ में तथा अय का अर्थ है – चलने वाला। इस प्रकार प्रत्यय शब्द का तात्पर्य है – शब्दों के साथ परन्तु बाद में चलने वाला। प्रायः प्रत्यय के दो रूप स्वीकार किए गए हैं – (1) कृत प्रत्यय (2) तद्धित प्रत्यय

(1) कृत प्रत्यय (कृदंत) जो प्रत्यय धातु या क्रिया के अंत में जुड़कर नए शब्द का निर्माण करते हैं उन्हें कृत प्रत्यय कहते हैं। कृत प्रत्यय के योग से बने शब्दों को (कृत+अंत) कृदंत कहते हैं। इनकी संख्या सात मानी गई है।

(i) भाववाचक कृदंत : जिस प्रत्यय से बने शब्द से भाव अर्थात् क्रिया के व्यापार का बोध हो उसे भाववाचक कृदंत कहते हैं जैसे 'सजा' शब्द के अंत में 'वट' प्रत्यय लगाने से 'सजावट' बन जाएगा। धातु के अंत में – आ, आई, आन, आप, आव, ई, इया, त, ती, न, नी, र, वट, हट आदि शब्द जोड़ने पर भाववाचक कृदंतीय संज्ञाएं बनती हैं जैसे –

आ = छाया, गुजारा / आई = लिखाई, लड़ाई / आन = लगान, रूदान / आप = कलाप, अलाप आव = चुनाव, घुमाव / इया = भइया, घटिया / ई = पढ़ाई, बोली / त = खपत, लागत / ती = बढ़ती, बहती / न = पुरान, मारन / नी = लड़नी, मरनी / र = ठोकर, चोकर / वट = सजावट, बुनावट / हट = घबराहट, अकुलाहट आदि।

(ii) कर्मवाचक कृदंत : जिस प्रत्यय के बने शब्द से किसी कर्म का ज्ञान हो अथवा पता चले उसे कर्मवाचक कृदंत कहते हैं। जैसे गा शब्द में ना प्रत्यय लगने से गाना तथा सूँघ शब्द में लगने से सूँघना बन जाता है।

(iii) करणवाचक कृदंत : जिस प्रत्यय से बने शब्द से क्रिया के साधन अर्थात् करण का बोध हो उसे करणवाचक कृदंत कहते हैं जैसे : रेत शब्द में ई प्रत्यय लगाने से रेती बन गया। जैसे – आ = झूला, घेरा / ई = फाँसी, घण्टी / ऊ = झाडू, माडू / न = झाड़न, बेलन / ना = करूना, घोटना आदि।

(iv) कर्तृवाचक कृदंत : जिस प्रत्यय से बने शब्द से कार्य करने वाले का अर्थात् कर्ता का पता चले उसे कर्तृवाचक कृदंत कहते हैं जैसे पढ़ना शब्द में वाला प्रत्यय लगकर पढ़नेवाला शब्द बन गया।

(v) क्रियावाचक कृदंत : जिस प्रत्यय से बने शब्द से क्रिया के होने का भाव प्रकट हो उसे क्रियावाचक कृदंत कहते हैं। जैसे भागता हुआ, लिखता हुआ आदि। इसमें मूल धातु के साथ 'ता' लगाकर बाद में हुआ लगा देने से वर्तमान कालिक क्रिया वाचक कृदंत बन जाता है। क्रियावाचक कृदंत केवल

पुल्लिंग और एकवचन में प्रयुक्त होते हैं – ता–डूबता/या–खोया, बोया/ कर– जाकर, देखकर/ ना– दौड़ना, सोना आदि।

(vi) स्थानवाचक कृदंत : जिस प्रत्यय से बने शब्द से स्थान का बोध हो उसे स्थानवाचक कृदंत कहते हैं जैसे क – बैठक, फाटक आदि।

(vii) विशेषणवाचक कृदंत : जिस प्रत्यय से बने शब्द से विशेषण का बोध हो उसे विशेषणवाचक कृदंत कहते हैं जैसे'– ना– सुहाना, भागना/ नी–हँसनी, जननी/ आवना–डरावना, सुहावना आदि।

(2) तद्धित प्रत्यय : जो प्रत्यय संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया विशेषण से जुड़कर नये शब्द का निर्माण करे उसे तद्धित प्रत्यय कहते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो धातुओं को छोड़कर शेष शब्दों से जोड़े जाने वाले प्रत्यय तद्धित प्रत्यय कहलाते हैं। इनके योग से बने शब्दों को तद्धितांत अथवा तद्धित शब्द भी कहते हैं। ल–शीतल/क–चमक आदि। इसके प्रायः दस भेद स्वीकार किए गए हैं।

(i) भाववाचक तद्धित : जिस प्रत्यय से बने शब्द से भाव का बोध हो उसे भाववाचक तद्धित कहते हैं जैसे :– आ–जोड़ना, सराफा/ आई–भलाई, चतुराई/आन–निचान/आयत–पंचायत, बहुतायत/त–चाहत, रंगत/ती–कीमती, बढ़ती/पन–लड़कपन, बालपन।

(ii) कर्तृवाचक तद्धित : जिस प्रत्यय से बने शब्द से किसी कार्य के करने वाले का बोध हो उसे कर्तृवाचक तद्धित कहते हैं। जैसे :– एड़ी – नशेड़ी, भँगेड़ी/ अक्–पाठक आदि।

(iii) गुणवाचक तद्धित : जिस प्रत्यय से बने शब्द से किसी गुण का बोध हो उसे गुणवाचक तद्धित कहते हैं जैसे :– ला–अगला, पिछला/वन्त–धनवन्त, शीलवन्त/हरा–सुनहरा/हा–हलवाहा, कविराहा/ऐल–खपटैल, दुधैल आदि।

(iv) ऊनता (लघुता) वाचक तद्धित : जिस प्रत्यय से बने शब्द से लघुता का बोध हो उसे ऊनता (लघुता) वाचक तद्धित कहते हैं जैसे – ई–पहाड़ी, डोरी/टा–कलूटा, रोंगटा/ड़ा–बछड़ा, मुखड़ा।

(v) स्थानवाचक तद्धित जिस प्रत्यय से बने शब्द से स्थान का बोध हो उसे स्थानवाचक तद्धित कहते हैं जैसे – आना–राजपुताना, तिलंगाना/इया–कलनतिया, कनौजिया।

(vi) संबंधवाचक तद्धित जिस प्रत्यय से बने शब्द से संबंध का ज्ञान हो उसे संबंधवाचक तद्धित कहते हैं जैसे – ससुराल, भतीजा आदि।

(vii) करणवाचक तद्धित जिस प्रत्यय से बने शब्द से क्रिया के साधन का बोध हो उसे करणवाचक तद्धित कहते हैं। जैसे आ–झूला, फाँसा, घेरा।

(viii) विशेषणवाचक तद्धित जिस प्रत्यय से बने शब्द से विशेषण का बोध हो उसे विशेषणवाचक तद्धित कहते हैं जैसे – इक–कार्मिक, धार्मिक/ई–आटी, देशी/ऊ–पेटू, झाँसू

(ix) सादृश्यवाचक तद्धित : जिस प्रत्यय से बने शब्द से समता का बोध हो उसे सादृश्यवाचक तद्धित कहते हैं जैसे हरा–सुनहरा, रूपहरा आदि।

(x) गणनावाचक तद्धित : जिस प्रत्यय से बने शब्द से संख्या का बोध हो उसे गणनावाचक तद्धित कहते हैं जैसे हरा – इकहरा, आ– पहला, वा–पाँचवा, था–चौथा आदि।

विद्वानों का यह भी मत है कि प्रत्ययों के इस वर्गीकरण का हिंदी में कोई विशेष औचित्य नहीं रह गया है क्योंकि संस्कृत के विपरीत हिंदी में एक ही प्रत्यय क्रिया से भी जुड़ जाता है और क्रिया के अतिरिक्त अन्य शब्दों से भी जुड़ सकता है। जैसे अक् प्रत्यय क्रिया से जुड़ कर बैठ**+**अक् – बैठक बन जाता है वहीं क्रिया से इत्तर शब्द पाठ से जुड़कर यह पाठक भी बन जाता है। प्रत्यय के स्रोतों के आधार पर इसे दो भागों में बाँट कर देखा जा सकता है (i) परम्परागत (ii) आगत (विदेशी)। परम्परागत प्रत्ययों में तत्सम्, तद्भव और इन्हीं की तरह निर्मित देशी प्रत्यय आते हैं। जबकि आगत प्रत्यय में हिन्दी के इत्तर विदेशी भाषाओं के प्रत्यय मुख्य रूप से रखे जा सकते हैं।

समास

दो या दो से अधिक शब्दों के मेल से बने हुए नवीन एवं सार्थक शब्द को 'समास' कहा जाता है। समास का तात्पर्य है 'संक्षिप्तीकरण'। समास दो शब्दों के मेल से बना है : सम् (पास) **+** आस (रखना, बैठना) अर्थात् पास रखना अथवा पास बैठना। दूसरे शब्दों में कहें तो 'समास' इस प्रक्रिया का नाम है जिसमें दो या अधिक शब्दों को मिलाकर उनके मध्य के सम्बंधसूचक आदि शब्दों को लोप अथवा समाप्त करके एक नया शब्द बनाया जाता है। जैसे 'रसोई के लिए घर' इसे हम 'रसोईघर' कहेंगे। 'दही में पड़ा हुआ बड़ा – दहीबड़ा। समास के नियमों के अंतर्गत निर्मित शब्द 'सामासिक शब्द' कहलाते हैं। इन्हें – 'समस्तपद' भी कहा जाता है। ध्यान रहे कि समास होने के पश्चात् विभक्तियों के चिह्न (परसर्ग) लुप्त हो जाते हैं। जैसे – राजपुत्र। सामासिक शब्दों के मध्य के संबंध को स्पष्ट करना 'समास–विग्रह' कहलाता है, जैसे – राजपुत्र – राजा का पुत्र। समास में सदैव दो पद (शब्द) होते हैं। पहले पद को पूर्वपद तथा दूसरे पद को उत्तरपद कहा जाता है। जैसे – ऊपर दिये गये शब्दों में 'रसोई', 'दहीं', 'राज' आदि पूर्वपद हैं तथा 'घर', 'बड़ा', 'पुत्र' आदि उत्तरपद हैं। 'संस्कृत' तथा अन्य भारतीय भाषाओं में 'समास' का बहुतायत में प्रयोग देखा गया है। भाषा शास्त्रियों ने प्रमुख रूप से समास के चार भेद किए हैं परन्तु तत्पुरूष समास के दो उप–भेदों (कर्मधारय और द्विगु) को विशेष रूप से ध्यान में रखकर इनकी संख्या मुख्यतः छः मानी गयी है। जो कि इस प्रकार से है :–

1. अव्ययीभाव, 2. तत्पुरूष, 3. द्विगु, 4. कर्मधारय, 5. द्वन्द्व, 6. बहुब्रीहि।

समास के भेद और उपभेदों पर विस्तार से एक चर्चा निम्न से दी जा रही है ताकि इनको स्पष्ट रूप से जाना जा सके।

(1) अव्ययीभाव – जिस समास का पहला पद प्रधान हो और अव्यय हो उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। भोलानाथ तिवारी के अनुसार इस समास में दो शब्दों से मिलकर जो शब्द बनता है, अव्यय (क्रिया विशेषण) का काम करता है, इसीलिए इसका नाम अव्ययीभाव है। उदाहरण :– यथा**+**शक्ति – यथाशक्ति, प्रति**+**दिन – प्रतिदिन। ऐसे ही भरपेट, एकाएक, धड़ाधड़ आदि। इसमें समस्त पद अव्यय बन जाता है अर्थात् समास लगाने के पश्चात् उसका रूप नहीं बदलता है। इसके साथ विभक्ति चिह्न भी नहीं लगता। हिन्दी में इस समास का पहला शब्द प्रायः संज्ञा होता है – रोतोरात, घटघट, हाथोहाथ आदि। कई विद्वान इस समास के उदाहरण देते हुए आजन्म, बेखटके, आमरण आदि को दर्शाते हैं परन्तु हिन्दी में इन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि इनमें क्रमशः 'आ', 'ब', 'आ', आदि उपसर्ग है, शब्द या पद नहीं। इनका हिन्दी में स्वतंत्र शब्द के रूप में प्रयोग नहीं होता है।

(2) **तत्पुरूष :–** जिस समास का उत्तरपद प्रधान हो और पूर्वपद गौण हो उसे तत्पुरूष समास कहते हैं। इसमें पहला शब्द प्रायः संज्ञा या विशेषण तथा दूसरा सर्वदा संज्ञा ही होता है। जैसे – तुलसीदासकृत – तुलसी द्वारा कृत (रचित)।

विभक्तियों के नामानुसार तत्पुरूष समास के छह भेद हैं अथवा लोप तथा पहले शब्द के कारक के आधार पर इसके छह भेद होते हैं : (i) कर्मतत्पुरूष (ii) करण तत्पुरूष (iii) सम्प्रदान तत्पुरूष (iv) अपदान तत्पुरूष (v) सम्बंध तत्पुरूष (vi) अधिकरण तत्पुरूष।

(i) **कर्म तत्पुरूष**– इसमें कर्म के कारक चिह्न का लोप हो जाता है। जैसे – चिड़ीमार (चिड़ियों को मारने वाला), गिरहकट (गिरह को काटने वाला), ग्रंथकर्ता (ग्रथ को करने वाला), मुँहतोड़ (मुँह को तोड़ने वाला)।

(ii) **करण तत्पुरूष**– तुलसीकृत (तुलसी द्वारा किया गया), हस्तलिखित (हस्त से लिखित), ईश्वरदत्त (ईश्वर से दिया हुआ), धनहीन (धन से हीन)।

(iii) **सम्प्रदान तत्पुरूष**– देशभक्ति (देश के लिए भक्ति), रसोईघर (रसोई के लिए घर), डाकगाड़ी (डाक के लिए गाड़ी), गुरूदक्षिणा (गुरू के लिए दक्षिणा)।

(iv) **अपादान तत्पुरूष**– भयभीत (भय से भीत), देशनिकाला (देश से निकाला), ऋणमुक्त (ऋण से मुक्त), जातिभ्रष्ट (जाति से भ्रष्ट)।

(v) **संबंध तत्पुरूष**– विद्यार्थी (विद्या का अर्थी), रामानुज (राम का अनुज), सेनापति (सेना का पति), देवालय (देव का आलय)।

(vi) **अधिकरण तत्पुरूष**– हरफनमौला (हरफन में मौला), दानवीर (दान में वीर), नगरवास (नगर में वास), घुडसवार (घोड़े पर सवार)।

(3) **द्विगु :–** इस समास में पूर्वपद संख्यावाचक विशेषण और समस्त पद–समूह का बोध करवाने की क्षमता होती है। इससे समूह अथवा समाहार का बोध होता है। जैसे नवग्रह (नौ ग्रहों का समूह), दोपहर (दो पहरों का समाहार), त्रिभुवन (तीन भुवन), इनमें नौ, दो, त्रि आदि शब्द पूर्वपद हैं तथा संख्यावाचक विशेषण को चरितार्थ करते हैं जबकि ग्रह, पहर, भुवन संज्ञा के रूप में द्रष्टव्य होते हैं।

(4) **कर्मधारय–** जिस समास का उत्तरपद प्रधान हो और पूर्वपद व उत्तरपद में विशेषण–विशेष्य अथवा उपमान–उपमेय का संबंध हो वह कर्मधारय समास कहलाता है। 'कर्मधारय' नामकरण में 'कर्म' का अर्थ है 'भेदक क्रिया' और 'धारय' का अर्थ है ' धारण करने वाला' तात्पर्य यह कि यह समास विशेषण की तरह भेदक क्रिया को धारण करता है, जिससे संज्ञा की विशेषता स्वयं ही स्पष्ट हो जाती है। दूसरे शब्दों में कहें तो विशेषण ही भेदक का कार्य करता है। जैसे 'सफेद हाथी' में 'सफेद' शब्द 'हाथी' को अन्य हाथियों से अलग करता है। इस समास में विशेषण–विशेष्य जैसे – महात्मा, नीलगाय, बदबू, सज्जन आदि है और उपमेय–उपामन जैसे – चरण–कमल (कमल रूपी चरण), कमलनयन (कमल जैसे नयन)। इस समास का एक भेद मध्यम पदलोयी कर्मधारय होता है – जिसमें मध्य का पद लुप्त अथवा समाप्त हो जाता है : गोबरगणेश (गोबर से बना गणेश), बैलगाड़ी (बैलों से खींची जाने वाली गाड़ी)।

(5) **द्वन्द्व–** जिस समास में दोनों पद प्रधान होते हैं तथा विग्रह करने पर 'और', 'अथवा', 'या', 'तथा', 'एवं' आदि का प्रयोग होता हो वह द्वन्द्व समास कहलाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो जिस समास में दो या

तीन संज्ञाओं को जोड़ा जाए तो वह द्वन्द्व समास होता है। जैसे :– पाप–पुण्य (पाप और पुण्य), खरा–खोटा (खरा और खोटा), माँ–बाप (माँ और बाप), तन–मन–धन (तन और मन तथा धन)। विद्वानों ने इसके तीन उपभेद स्वीकार किए हैं:– (i) इतरेतर द्वन्द्व (ii) वैकल्पिक द्वन्द्व (iii) समाहार द्वन्द्व।

(i) **इतरेतर द्वन्द्व**: इस समास में योगसूचक समुच्चयबोधक अव्यय 'और' का लोप अवश्य ही होता है। राधा–कृष्ण, दाल–भात, सीता–राम आदि।

(ii) **वैकल्पिक द्वन्द्व**– जहाँ पर विकल्पसूचक समुच्चयबोधक 'या', 'अथवा' का लोप द्रष्टव्य हो वह वैकल्पिक द्वन्द्व कहलाता है। जैसेः छोटा–बड़ा, भला–बुरा, थोड़ा–बहुत आदि। यह समास परस्पर विरोधी भावों के बोधक शब्दों के योग से ही निर्मित होता है। ऊपर दिये उदाहरण में छोटा–बड़ा, भला–बुरा, थोड़ा–बहुत आदि इसी ओर संकेत करते हैं।

(iii) **समाहार द्वन्द्व**– जहाँ प्रयुक्त पदों के अर्थ के अतिरिक्त उसी प्रकार का और भी अर्थ द्रष्टव्य हो वहां समाहार द्वन्द्व होता है। जैसे – रूपया–पैसा, खाना–पीना, सेठ–साहूकार, कहा–सुनी आदि। ध्यान देने योग्य है कि प्रतिध्वनि व शब्दों पुनरूक्ति के द्वारा बनाये गए सामासिक पद भी इसी के अंतर्गत आते हैं जैसेः आस–पास, भीड़–भाड़, प्रतिध्वनि का उदाहरण है वैसे ही भाग–दौड़, देखा–देखी शब्दों की पुनरूक्ति द्वारा ही बनाये गये हैं।

(6) **बहुव्रीहि :** जिस समास में दोनों पद अप्रधान हो और समस्तपद के अर्थ के अतिरिक्त कोई–सांकेतिक अर्थ प्रधान हो उसे बहुब्रीहि समास कहते हैं। तिवारी के अनुसार 'जिस समास में कोई भी शब्द प्रधान न हो और दोनों मिलकर किसी एक संज्ञा में विशेषण हों तथा उसी को व्यक्त करें।' जैसेः– दशानन – (दश है आनन (मुख) जिसके अर्थात् रावण), नीलकंठ – (नीला है कंठ जिसका अर्थात शिव) । सामासिक शब्दों में अर्थ भेद के कारण कभी–कभी समास–भेद भी हो जाना स्वाभाविक है। जैसे कर्मधारय समास में समस्त–पद के दोनों पदों में विशेषण–विशेष्य का सम्बंध नहीं होता अपितु वह समस्त पद ही किसी अन्य संज्ञादि का विशेषण होता है। जिस कारण शब्दार्थ गौण होता है और कोई भिन्नार्थ ही प्रधान हो जाता है। जैसे – नील**+**कंठ – नीला है कंठ जिसका अर्थात् शिव। इसी तरह 'रसोईघर' – रसोई के लिए घर (सम्प्रदान तत्पुरूष) रसोई का घर (सम्बंध तत्पुरूष) बन जाता है।

यह प्रायः देखा गया है कि हिन्दी में दो शब्दों के योग से ही समास बनता है परन्तु 'तन–मन–धन', 'हर–फन–मौला' आदि जैसे तीन या अधिक शब्दों के समास भी अपवाद–स्वरूप देखने को मिलते हैं। यह ध्यान रहे कि संधि और समास में अंतर है। जहां संधि वर्णों में होती है। इसमें विभक्ति या शब्द लोप नहीं होता है जैसे – देव**+**आलय – देवालय। समास दो पदों में होता है। समास होने पर विभक्ति या शब्दों का लोप भी हो जाना पाय जाता है। जैसे माता–पिता – माता और पिता।

लिंग

शब्द के जिस रूप से उसकी जाति (पुरूष या स्त्री) का निर्धारण होता है उसे लिंग कहते हैं। हिन्दी में केवल दो ही लिंग प्रचलित हैं – स्त्रीलिंग और पुल्लिंग। प्राचीन आर्य भाषाओं में तीन लिंग मिलते हैं – पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग। जिस संज्ञा से पुरूषत्व का बोध होता है उसे पुल्लिंग कहते हैं जैसे – लड़का, बैल, पेड़, नगर, कबीर, आदि। जिस संज्ञा से स्त्रीत्व का बोध होता है उसे स्त्रीलिंग कहते हैं जैसे – लड़की, गाय, लता, पुरी, पार्वती, मीराबाई आदि। डा. हरदेव बाहरी ने पुल्लिंग के निम्न भेद किये हैं –

व्यक्तिवाचक	–	पुल्लिंग : कबीर, चन्द्रप्रकाश, राम, श्याम इत्यादि
		स्त्रीलिंग : कुमारी, नर्तकी, मोसी, जाटनी आदि
जातिवाचक	–	पुल्लिंग : तोता, मच्छर, कोट, कमरा।
		स्त्रीलिंग : चिड़िया, मछली, धोती, गली।
समूहवाचक	–	पुल्लिंग : झुंड, गुच्छा, बंडल, कुटुंब, गिरोह।
		स्त्रीलिंग : मंडली, सेना, कथा, टोली, सभा, फौज, भीड़।
द्रव्यवाचक	–	पुल्लिंग : सोना, रूपा, दूध, पानी।
		स्त्रीलिंग : चांदी, धातु, धान, मिट्टी।
भाववाचक	–	पुल्लिंग : क्रोध, दान, प्रश्न, यौवन, बचपन।
		स्त्रीलिंग : इच्छा, सूचना, मूर्खता, हँसी, थाकवट।

कुछ प्राणिवाचक शब्दों में प्रायः स्त्रीलिंग नहीं मिलता अतः ये शब्द हमेशा पुल्लिंग ही होते हैं जैसे – पक्षी, उल्लू, कौआ, भेड़िया, चीता, खटमल, केंचुआ आदि। कुछ शब्द ऐसे भी हैं जिनके प्रायः स्त्रीलिंग ही मिलते हैं पुल्लिंग नहीं होते हैं, जैसे – चील, कोयल, बटेर, गिलहरी, तितली, जोंक, मछली, मक्खी और मैना आदि। कई बार लिंग भेद करने के लिए इनके आगे 'नर' और 'मादा' शब्द पहले जोड़ा जाता है जैसे – नर बटेर, मादा बटेर आदि।

संस्कृत के पुल्लिंग शब्दों की रूप की दृष्टि से पहचान इस प्रकार है –

1. ख या ज – दुःख, सुख, मुख, लेख, नख, अनुज, जलज
2. जिन संज्ञाओं के अंत में 'त्र' होता है – चित्र, क्षेत्र, पात्र, नेत्र, गोत्र, चरित्र आदि।
3. जिनके अंत में 'अ' प्रत्यय होता है – कौशल, शैशव, वाद, क्रोध, वेद आदि।
4. जिनके अंत में 'आर', 'आय', व 'आस' है – विकार, विस्तार, संसार, अध्याय, उपाय, समुदाय, उल्लास, विलास, ह्रास आदि।
5. जिनके अंत में 'य' होता है – कृत्य, माधुर्य, सौन्दर्य, धैर्य, कार्य।

रूप और बनावट की दृष्टि से स्त्रीलिंग संज्ञा की पहचान इस प्रकार है –

1. आकारांत संज्ञाएं – दया, माया, कृपा, लज्जा, हया, शोभा, सभा।
2. नाकारांत संज्ञाएं – प्रार्थना, वेदना, प्रस्तावना, रचना, घटना आदि।
3. जिन शब्दों के अंत में 'ता' होता है – नम्रता, लघुता, सुंदरता, प्रभुता, जड़ता।
4. जिन शब्दों के अंत में 'इ' होता है – निधि, विधि, परिधि, अग्नि, छवि, केलि, रूचि आदि।
5. 'इया' प्रत्ययांत शब्द – महिमा, गरिमा, कालिमा, लालिमा आदि।

अर्थ की दृष्टि से पुल्लिंग

1. धातुओं के नाम – सोना, ताँबा, लोहा, सीसा, काँसा, पारा, पीतल।
2. रत्नों के नाम – हीरा, मोती, माणिक, मूँगा, पन्ना, नीलम आदि।
3. भोज्य पदार्थों के नाम – पुआ, पेड़ा, भात, रायता, लड्डू, हलुवा, समोसा, चॉकलेट।

4. अनाज – गेहूँ, चना, जौ, चावल, बाजरा, उड़द, तिल।
5. दिन साल महीनों के नाम – सोमवार, मंगलवार, माघ, पौष।
6. ग्रहों के नाम – सूर्य, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र
7. पेड़ों के नाम – बरगद, पीपल, शीशम, सागौन, जामुन।

अर्थ की दृष्टि से स्त्रीलिंग

1. नवरात्रों के नाम – रोहिणी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, अश्विनी।
2. नदियों के नाम – गंगा, यमुना, सरस्वती, मिसिसिपि
3. झीलों के नाम – चिलका, साँभर
4. भाववाचक संज्ञाएं – कटुता, गरिमा, ऋद्धि, सिद्धि, इच्छा, अर्चना आदि।
5. तिथियों के नाम – परिवा, द्वितीया, तीज, अष्टमी, अमावस्या।
6. किराने के नाम – लौंग, इलायची, सुपारी, जावित्री, दालचीनी आदि।

वचन

'वचन' का अर्थ है संख्या/संज्ञा के जिस रूप से संख्या का बोध होता है उसे वचन कहते हैं। हिन्दी में दो वचन होते हैं – एकवचन और बहुवचन। जिस रूप से एक व्यक्ति या पदार्थ का बोध होता है उसे एक वचन और जिससे एक से अधिक व्यक्तियों या पदार्थों का बोध होता है उसे बहुवचन कहते हैं। जैसे लड़का, टोपी, लुधियाना, राम, शाम, रंग एक वचन हैं, लड़के, टोपियां, रंगों, रूपों, लड़कियाँ आदि बहुवचन है। आदर के लिए बहुवचन का प्रयोग होता है। जैसे – कण्व ऋषि तो ब्रह्मचारी हैं, राजा के बेटे आये हैं। हिन्दी में कुछ शब्द बहुवचन के रूप में प्रयुक्त होते हैं जैसे – प्राण, दर्शन, समाचार, हस्ताक्षर, आँसू, भाग्य, हाठ, लोग आदि। एक वचन से बहुवचन बनाने के लिए निम्नलिखित प्रत्ययों का प्रयोग होता है – 1. शून्य (हाथी, साधु) 2. ए (घोड़े, लड़के, रास्ते, बेटे, हीरे, बच्चे, भाले, पहिये) 3. आँ (लड़कियाँ, नालियाँ, गुड़ियाँ, रानियाँ, चिड़ियाँ)। 4. एँ (किताबें, बहुएँ, आंखें, बातें, पुस्तकें, चीजें) 5. यें (शालायें, मातायें, अप्सरायें) इत्यादि। डा. हरदेव बाहरी के अनुसार व्यक्तिवाचक, भाववाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं का प्रयोग प्रायः एक वचन में होता है और जातिवाचक और समूहवाचक संज्ञाएँ दोनों वचनों में प्रयुक्त होती हैं।

कारक

कारक का अर्थ है – क्रिया से सम्बन्ध दर्शाने वाला। अर्थात् क्रिया के जिस रूप से उसका संबंध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ प्रकाशित होता है, उस रूप को कारक कहते हैं। जैसे – मोहन ने शेर को देखा। इस वाक्य में ने, को कारक चिह्न है। इन्हें 'परसर्ग' भी कहते हैं क्योंकि यह संज्ञा या सर्वनाम के बाद आते हैं। संस्कृत में कारकों की संख्या आठ मानी गई है – कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण, सम्बोधन। सभी कारकों के पहचान चिह्न इस प्रकार हैं –

कर्ता कारक – ने, कर्म कारक – को, करण – से, सम्प्रदान – को, अपादान – से, संबंध – का, के, की, अधिकरण – में, पर, संबोधन – हे, अजी, अहो, अरे।

1. कर्ताकारक (ने) – क्रिया का सम्पादन करने वाला। जैसे – लड़का जाता है, लड़की जाती है, लड़की ने खाना खाया। इस कारक के अधिकांश प्रयोगों में कोई विभक्ति नहीं आती। हिन्दी में कर्ता कारक

की जो 'ने' विभक्ति आती है, वह यथार्थ में संस्कृत की तृतीया विभक्ति (करण कारक) के 'ना' प्रत्यय का रूपांतर है, परन्तु हिन्दी में 'ने' का प्रयोग संस्कृत 'न' के समान कभी नहीं होता।

2. कर्म कारक (को) – क्रिया का प्रभाव या फल जिस पर पड़े उसे कर्म कारक कहते हैं जैसे – चोर को पुलिस ने पकड़ा, मैंने श्याम को बहुत डाँटा। प्रायः इसकी विभक्ति का लोप हो जाता है, यथा – मैंने शेर देखा, सिपाही कई लड़ाईयाँ लड़ा। इस विभक्ति की व्युत्पत्ति के विषय में विद्वानों में मतभेद है 1. ट्रंप ने 'को' को संस्कृत 'कृत' से विकसित माना है। 2. बीम्स, हार्नले, चटर्जी आदि के अनुसार 'को' का संबंध संस्कृत 'कक्ष' से है – कक्ष > ककखं > काख > काहं > कहं > कहुँ > कौं > को।

3. करण कारक (से) – करण का अर्थ है – साधन। क्रिया का सम्पादन जिस वस्तु के द्वारा हो, उसे करण कारक कहते हैं जैसे – हम नाक से साँस लेते हैं, आपके दर्शन से लाभ हुआ, विवाह धूमधाम से हुआ। इस विभक्ति को व्युत्पत्ति केलॉग संस्कृत 'संगे' जोड़ते हैं – संगे > सैं > से > से।

4. सम्प्रदान कारक (को) – क्रिया जिसके लिए हो, उसे सम्प्रदान कारक कहते हैं, यथा – लड़की को पानी पिलाओ, राजा ने ब्राह्मण को दान दिया। प्रायः लगना, मिलना, दिखना, प्रणाम, नमस्कार, धन्यवाद, बधाई, जाना पड़ा, करना होगा, रोना आया, सुनाई पड़ा, दिखाई नहीं देता आदि में सम्प्रदान कारक का प्रयोग होता है।

5. अपादान कारक (से) – क्रिया का जिससे अलगाव हो, उसे अपादान कारक कहते हैं, यथा – आम पेड़ से गिर पड़ा, इन कपड़ों में से आप कौन सा लेंगे आदि। इसके अतिरिक्त माँगना, लेना, लाना, बचना, नटना, रोकना, छूटना, डरना, छिपना आदि क्रियाओं का स्थान व कारण तथा परे, बाहर, दूर, आगे, हटकर आदि अव्ययों के साथ अपादान कारक का प्रयोग होता है।

6. सम्बन्ध कारक (का, के, की) – क्रिया से भिन्न शब्द के साथ संबंध सूचित करने वाला। यथा – पीने का पानी, बैठने की जगह, आम के पेड़ आदि।

7. अधिकरण कारक (में, पर) – क्रिया का आधार सूचित करने वाला। यथा – दूध में मिठास, तिल में तेल, पुस्तक दस रूपये में मिली। नौकरों पर दया करो, मेरे बोलने पर वह नाराज हुआ, समय पर वर्षा नहीं हुई आदि।

8. संबोधन (हे, अरे) – किसी को सचेत करने या पुकारने के लिए इस कारक का प्रयोग होता है जैसे – अरे! भाई यह क्या कर रहे हो, हे प्रभु ! क्षमा करना आदि।

पाठ संख्या - 2.2

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया रूप

संज्ञा

संज्ञा किसी व्यक्ति, वस्तु या भाव के नाम की परिचायक होती हैं। विद्वानों ने संज्ञा के निर्माण में प्रकृति और प्रत्यय को महत्वपूर्ण तत्व माना है। प्रकृति से अभिप्राय उस मूल शब्द से है जो अखंड और अविभाज्य रहता है और प्रत्यय मूल शब्द के अन्त में जुड़कर अर्थ की स्पष्ट प्रतीति करवाता है। जैसे भारतीय, भलाई, बुराई, दुःखी आदि में क्रमशः भारत, भला, बुरा, दुःख प्रकृति है और ईय, ई, ई, ई प्रत्यय है। एक और उदाहरण देखिए–लड़का जा रहा है, लड़कों ने जाना है इसमें लड़का संज्ञा पद अपने मूल रूप हैं और 'लड़कों' संज्ञापद विकृत रूप में है। ध्वनि की दृष्टि से संज्ञा दो प्रकार की होती है–स्वरात और व्यंजनात। जिन संज्ञा शब्दों के अंत में स्वर रहता है, वे स्वरांत कहलाते हैं। इनमें आ, इ, ई, उ, ऊ से अंत होने वाली संज्ञाएं ही प्रमुख हैं जैसे बालक, हाथी, घोड़ा, शक्ति, पशु, बहू आदि जिन संज्ञा शब्दों के अंत में व्यंजन आते हैं वे व्यंजनांत कहलाते हैं जैसे–आम्, रोग्, मेज, बाल्, ईख, पुस्तक, जगत्, विद्युत् आदि।

हिन्दी संज्ञा अपने मूल और विकृत दोनों रूपों में होती है। संज्ञा के मूल रूप और विकृत रूप को कारक, लिंग और वचन प्रभावित करते हैं। अतः इनके आधार पर ही हिन्दी संज्ञा के रूपों का अध्ययन किया जा सकता है। उदाहरण देखिए :–

लड़का खेल रहा है	–	पुल्लिंग, एकवचन
लड़की खेल रही है	–	स्त्री, एकवचन
लड़के खेल रहे है	–	पुल्लिंग, बहुवचन
लड़कियाँ खेल रही हैं	–	स्त्री बहुवचन
लड़कों ने खेल खेला	–	विभक्ति सहित पु.
लड़कियों ने खेल खेला	–	विभक्ति सहित स्त्री.

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट होता है संज्ञा शब्दों लड़का, लड़की, लड़के, लड़कों, लड़कियों के रूप में परिवर्तन लिंग, वचन और कारक के कारण ही होता है। इस रूपांतर के कुछ नियम है जो इस प्रकार हैं–

1. हिन्दी संज्ञा के कारकीय रूपों का निर्माण, जिन प्रत्ययों की सहायता से होता है वे हैं–शून्य, ए, एँ, आँ (याँ) ओं (यों) ओ अकारांत शब्दों जैसे बेल, घर, बहन, पुस्तक, इत्यादि में विभक्ति–प्रत्यय मात्रा के रूप में लगती है। जैसे–बेलों, घरों, बहनों, पुस्तकों आदि।
2. आकारांत पुल्लिंग शब्दों में विभक्ति–प्रत्यय मात्रा के रूप में लगती है। यथा–घोड़ा, घोड़े, घोड़ों। जिन स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के अंत में 'इया' प्रत्यय जुड़ा रहता है, उन शब्दों के साथ भी यही नियम लागू होता है। जैसे–बुढ़िया, बुढ़ियाँ, बुढ़ियों।

3. आकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के बाद में 'ए' तथा 'ओ' लगाकर नए शब्द निर्मित होते हैं। जैसे–माता–माताएँ–माताओं, लता–लताएँ–लताओं।

4. इकारान्त संज्ञा शब्दों के मूल रूप एकवचन और बहुवचन में समान रहते हैं जैसे–कवि, रवि, पति आदि। इनका बहुवचन में परिवर्तन 'यों' जोड़ने से होता है जैसे–कवियों, पतियों, रवियों आदि।

5. इसी प्रकार ईकारान्त संज्ञा शब्दों में मूल और विकृत रूप एकवचन में समान रहते हैं, किन्तु बहुवचन में परिवर्तित हो जाते हैं। जैसे रानी–रानियाँ, कुर्सी–कुर्सियाँ, नदी–नदियाँ।

6. अकारान्त संज्ञा शब्दों के मूल रूप और विकृत रूप एकवचन में समान रहते हैं, जबकि बहुवचन में मूल रूप तो एक वचन के समान ही बने रहते हैं। परंतु विकृत रूपों में 'ओ' का योग हो जाता है जैसे–पशु, पशुओं, गुरू–गुरूओं, शत्रु–शत्रुओं।

7. ऊकारान्त संज्ञा शब्दों के मूल रूप एकवचन और बहुवचन में समान रहते हैं तथा विकृत रूप भी एकवचन मे मूल रूप के समान प्रयुक्त होते हैं, परन्तु बहुवचन में आकर इन विकृत रूपों से अंतिम 'ऊ' तो हट जाता है और उसके स्थान पर 'उओ' का प्रयोग होता है। जैसे–आलू, भालू, बहू, झाड़ू और आलुओं, भालुओं, बहुओं, झाड़ुओं आदि।

8. आ, ई, ई, इन, नी, ती, आनी, आइन, इया प्रत्ययों का प्रयोग स्त्रीलिंग बनाने के लिए किया जाता है जैसे–सुता, कांता, कुमारी, हथिनी, सर्पिणी, दुलहिन, बाघिन, जाटनी, मोरनी, युवती, देवरानी, ठकुराइन, जुलाहिन, खटिया आदि। पुल्लिंग बनाने के लिए अ, आ, ई आदि प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है यथा–कुत्ता, चूहा, दादा, पुत्र, बालक, बच्चा, बेटा, बैल माली आदि। वाक्य रूप में संज्ञा पदों के रूपांतरण के उदाहरण देखिए :–

बच्चा खेल रहा है (पु.)	–	बच्ची खेल रही है (स्त्री.)
शेर गरज रहा है (पु.)	–	शेरनी गरज रही है (स्त्री.)
कुत्ता दूध पी गया (पु.)	–	कुतिया दूध पी गई (स्त्री.)

9. संज्ञा शब्दों के वचन बदलने के लिए शून्य, ए, आँ, ऐं, ओं, ओ, गण, जन, लोग आदि प्रत्ययों का प्रयोग होता है। जैसे–हाथी, साधु, घोड़े, लड़के, लड़कियाँ, गुड़ियाँ, किताबें, बहुएँ, लड़कों, साथियों, भाइयों, बहनों, मंत्रिगण, कविजन, राजलोग आदि।

10. इसके अतिरिक्त कुछ संज्ञा शब्दों के रूप देखिए –

    1. बच्चा, बच्चे, बच्चों, बच्चो, बच्ची, बच्चियों, बच्चियाँ, बच्चियों
    2. कुत्ता, कुत्ते, कुत्तों, कुत्तो, कुतिया, कुतियाँ, कुतियों, कुतियो आठ रूप।
    3. माली (माली), मालियों, मालियो, मालिन, मालिनें, मालिनियों, मालिनियो
    4. माला, मालाएँ, मालाओं, मालाओ आदि।

11. संज्ञा के कारकीय रूप – हिन्दी संज्ञा के कारकीय रूप सभी कारकों, लिंगों और वचनों में प्राप्त कारकीय रूप तीन प्रकार के हैं – अविकारी रूप, विकारी रूप, सम्बोधन रूप। क्रमशः जिनके अन्य

कारक चिन्ह न लगे। जैसे राम गया में राम। दूसरा जिनके साथ कारक चिन्ह अवश्य लगे जैसे लड़के ने फूल तोड़ा में लड़के तीसरा जिसमें न सम्बोधन हो। जैसे – ओ मोहन! में मोहन (क) बच्चा संज्ञा के कारकीय रूप निम्नलिखित अनुसार बनते हैं –

(क)	कारक	एकवचन	बहुवचन
	कर्ता	बच्चे ने	बच्चों ने
	कर्म	बच्चे को	बच्चों को
	करण	बच्चे से	बच्चों से
	सम्प्रदान	बच्चे के लिए	बच्चों के लिए
	अपादान	बच्चे से	बच्चों से
	संबंध	बच्चे को, का, की	बच्चों को, का, की
	अधिकरण	बच्चे में, पर	बच्चों में, बच्चों पर
	संबोधन	हे बच्चा!	हे बच्चो!

(ख) अकारांत 'देव' संज्ञा शब्द के कारकीय रूप देखिए – देव ने (कर्ता) देव को (कर्म), देव से (करण), देव के लिए (संप्रदान), देव से (अपादान), देव के, का, की (संबंध), देव में, पर (अधिकरण), हे देवो (सम्बोधन) और बहुवचन देवों ने। इस रूप रचना में देव के केवल तीन ही रूप बनते हैं–देव, देवों और देवो। इसी प्रकार बालक, घर, देश, पुत्र, गुरू, मुनि, माली, डाकू, धोबी, ऋषि, पति, कवि, आदि पुल्लिंग शब्दों के रूप इसी नियम के अन्तर्गत बनते हैं।

(ग) स्त्रीलिंग इकारांत और इया प्रत्ययांत संज्ञा शब्दों के कारकीय रूप तीन ही बनते हैं जैसे–तिथि, तिथियों, गति–गतियाँ–गतियों, कृति–कृतियाँ, कृतियों, शुद्धि–शुद्धियों आदि।

(घ) माता आदि आकारांत स्त्रीलिंग के चार रूप होते हैं–माता, माताएँ, गौ, गौएँ, गौओं, गौओ

सर्वनाम

सर्वनाम संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं। संज्ञा की भांति ही इनके विकारी और अविकारी रूप होते हैं। सर्वनाम किसी भी भाषा में प्राण शक्ति का कार्य करते हैं। इनका प्रयोग भाषा में अन्य सभी शब्दों की अपेक्षा अधिक प्रयोग होता है। सर्वनाम वाक्य को सुसंगठित तथा लिखने एवं बोलने के स्तर पर कलात्मकता प्रदान करते हैं। सर्वनाम के रूप में परिवर्तन संज्ञा की तरह लिंग, वचन और कारक के कारण नहीं होते बल्कि, वचन और कारक के कारण होते हैं। सर्वनाम पु० और स्त्री० में समान रूप में प्रयुक्त होते हैं। परन्तु वचन और कारक के अनुसार परिवर्तित हो जाता है। जैसे एकवचन मैं, बहुवचन में हम हो जाता है। इसी प्रकार कारक में होता है। कर्ता कारक एकवचन में, बहुवचन में हम प्रयोग होता है। संबंध कारक में लिंग परिवर्तन भी होता है जैसे–मेरा घोड़ा, मेरी घोड़ी, उनका बैल, उनकी साईकल आदि। कारकों की विभक्तियाँ लगने से सर्वनामों के रूप में विकार आता है जैसे – मैं, मेरा, मुझे, मुझसे, मुझको, तुम–तुम्हारा, तुम्हें, तुमको, हम–हमें, हमारा; कौन–किसे, किसको, किसने आदि। प्रसिद्ध भाषा शास्त्री कामताप्रसाद गुरु ने 'हिन्दी व्याकरण' में सर्वनाम

के 6 भेद किये हैं :

1. पुरुषवाचक (मैं, तू, आप)
2. निजवाचक (आप)
3. निश्चयवाचक (वह, यह, सो)
4. सम्बन्धवाचक (जो)
5. प्रश्नवाचक (कौन, क्यों)
6. अनिश्चयवाचक (कोई, कुछ)

1. पुरुषवाचक सर्वनाम :

किसी भी प्रसंग में वक्ता के सामने तीन प्रकार के व्यक्ति आते हैं। पहला–वह स्वयं। दूसरा–सुनने वाला। तीसरा–कोई अन्य व्यक्ति जिसके विषय में बातचीत हो रही है। इसलिए हिन्दी में तीन प्रकार के पुरुष–वाचक सर्वनाम प्रचलित हैं–उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष, अन्य पुरुष उत्तम पुरुष सर्वनाम के रूप और विकास इस प्रकार है–

	कारक	एक वचन	बहुवचन
अविकारी रूप	कर्त्ता	मैं	हम
विकारी रूप	कर्म	मैं, मुझ	हमें (हम को)
संबंध रूप	संबंध	मेरा	हमारा

1.1 उत्तमपुरुष सर्वनामों का विकास क्रम इस प्रकार है-

मैं

संस्कृत के 'मया' शब्द से ही हिन्दी में 'मैं', शब्द की उत्पत्ति हुई। संस्कृत का 'मया' प्राकृत में 'गए' हुआ अपभ्रंश में 'महँ' होकर हिन्दी में 'म' हो गया।

मुझ

संस्कृत के मध्यम > प्राकृत मज्झम् > अपभ्रंश मज्झु > हिन्दी मुझ 'मैं' के विकारी रूप में ने का प्रयोग नहीं होता, 'ने' मूल रूप में 'मैं' में ही प्रयुक्त होता है।

मुझे

उत्तम पुरुष में कर्म या सम्प्रदान कारक का बोध मुझ+ए 'मुझे' से कराया जाता है। 'ए' का विकास क्रम अस्पष्ट है। हिन्दी की प्राचीन पुस्तकों में 'मुज्झे' मिलता है।

मेरा

संस्कृत का 'मय' शब्द से ही 'मेरा' सर्वनाम का विकास हुआ है। प्राकृत में 'मव', अपभ्रंश में मउ, प्राचीन हिन्दी में मोरा और आधुनिक हिन्दी में 'मेरा' रूप विकसित हो जाता है।

हम, हमें और हमारा

उत्तम पुरुष में कर्ता कारक बहुवचनी रूप 'हम' संस्कृत के 'अस्मद' तथा प्राकृत, अपभ्रंशों के 'अम्ह' से संबंधित जान पड़ता है। 'हम' का प्रयोग एकवचन में रूढ़ होता जा रहा है। मैथिली, मगही, भोजपुरी में तो 'हम' का प्रयोग एकवचन में ही होता है। 'हमें' संस्कृत के अस्मे > हिन्दी हमें विकसित हुआ है। 'हमारा' सर्वनाम संस्कृत के अस्माकम् > प्राकृत अह्मण > अपभ्रंश अम्हार > हमार > हमारो > हमारा

1.2 मध्यम पुरुष सर्वनाम के रूप और व्युत्पत्ति

अविकारी	–	तूँ, तू, तुम
विकारी	–	तुझ, तुम, तुम्हें
सम्बन्ध	–	तेरा, तुम्हारा
आदरसूचक	–	आप

विकास

तूँ, तू, तुम का विकास संस्कृत के 'त्वम्' से हुआ है। संस्कृत के त्वम् > प्राकृत तुवं > अपभ्रंश > तुहुँ, तुउँ > तूँ हिन्दी में विकसित होता है। त्वम् का विभक्ति रहित मूल भाग तू बन जाता है और 'त्वम्' में से अम् हट जाने से 'तुम' बन जाता है।

तुझ, तुम्हें, तुम्हारा

संस्कृत के सम्प्रदान कारकी रूप 'तुभ्यम्' के स्थान पर तुम का प्रयोग हिन्दी तथा हिन्दी की अनेक सगोत्री भाषाओं में मिलता है। 'झ' संस्कृत के 'भ्यम्' का स्थानापन्न है। संस्कृत की 'ध्य' और 'भ्य' ध्वनियाँ 'ज्झ' में परिवर्तित हुई। 'ध्यान' को ज्झाण तथा अभ्यागत को 'अज्झाहओ' रूप मिला। हिन्दी के अतिरिक्त कौरवी, राजस्थानी, मराठी, आदि भाषाओं में भी 'तुझ' प्रचलित है। 'तुझ' का संश्लिष्ट रूप 'तुझे' हो जाता है यथा तुझ+हि (प्रत्यय) – तुझहि > तुझई > तुझे। 'तुम्हें' सर्वनाम संस्कृत के युष्मे > पालि तुम्हे > प्राकृत तुम्हे > अपभ्रंश तुम्हे > हिन्दी तुम्हें के रूप में विकसित होता है। भाषा शास्त्रियों ने 'तुम्हारा' की उत्पत्ति प्राकृत तुम्ह+करको > तुम्ह अरओ > तुम्हारा रूप में ज्ञात होता है।

आप : इस मध्यम पुरुषी सर्वनाम में आदर की सूचना मिलती है। व्युत्पति की दृष्टि से आप का विकास 'आत्म' या आत्मन् से सम्भावित है। 'आत्म' के 'अप्प' आदि रूप पालि, प्राकृत अपभ्रंश युगों से ही मिलने लगते है।

1.3 अन्यपुरुष सर्वनाम के रूप और व्युत्पत्ति :

अविकारी	–	यह, ये (निकटवर्ती)
		वह, वे (दूरवर्ती)
विकारी	–	इस, इसे, इन, इन्हें (निकटवर्ती)
		उस, उसे, उन, उन्हें (दूरवर्ती)

विकास

यह, ये, वह, वे

यह के विकास के सम्बन्ध में प्रायः कोई विवाद नहीं है। विद्वान इसका संबंध 'एष' से मानते हैं : संस्कृत एष > पालि एसो > प्रा० एसो > अप० एसो > एहो, एह > एह > यह। सुनीति कुमार चैटर्जी 'ये' का विकास एतैः > एतेहि मानते हैं। 'वह' का विकास क्रम बहुत स्पष्ट नहीं है। संस्कृत सः का प्रयोग वह के स्थान पर होता है सं० सः > प्रा० सो > हिन्दी वह। कुछ विद्वान् सं० असौ > पा. असु > प्रा० असो > अहाँ > आहे > वह रूप में इसका विकास मानते हैं। 'वे' सर्वनाम वह के हकाररहित (व) के साथ 'ए' के संयोग से 'वे' बना है।

इस, इन, उस, उन

सुनीति कुमार चटर्जी इस का मूल संस्कृत के 'एतस्य' से इसे जोड़ते हैं। 'इन' का संबंध कई शब्दों से जोड़ा जाता रहा है। जैसे – एतानाम > एताणाम दूसरा – एतेषाम् > एदाण > एअण > एह्म > इन्ह > इन। 'उस' की व्युत्पत्ति अमुष्य > अउँस्से > अउस्स > उस्स > उस से मानी जाती है। अमूनाम् > अउण > अउण > उण्ह > उन्ह > उन के विकसित माना जाता है।

2. प्रश्नवाचक सर्वनाम के रूप और व्युत्पत्ति

अविकारी रूप – कौन, क्या

विकारी रूप – किस, किन

कौन, क्या, किस, किन का विकास

'कौन' का विकास संस्कृत के 'कः पुन' से हुआ है जैसे स० कः पुन > प्रा० को पन > अप० कवण > हिन्दी कौन। 'क्या' का विकास भोला नाथ तिवारी इस प्रकार मानते हैं – सं० कस्य + कः > प्रा० किस्सा > कीसा > किआ > क्या। उनके अनुसार प्राकृत से तो 'क्या' का विकास स्पष्ट है। संस्कृत के 'कस्य' से किस शब्द बना है। 'किन' की उत्पत्ति सम्भवतः संस्कृत के 'केषाम्' से हुई है।

3. सम्बन्धवाचक सर्वनाम रूप और व्युत्पत्ति

अविकारी रूप – जो

विकारी रूप – जिस, जिन

जो, जिस, जिन का विकास

'जो' की उत्पत्ति संस्कृत के यः से हुई है। 'यस्य' से 'जिस' का विकास हुआ है। 'जिन' संस्कृत के येषानाम > पालि येसानं > जिण > जिण्हं > जिन, जिन्ह से विकसित हुआ है।

4. अनिश्चयवाचक सर्वनाम

अविकारी रूप – कोई, कुछ

विकारी रूप – किसी, किन्हीं

कोई, कुछ, किसी, किन्हीं का विकास

कोई संस्कृत के कोऽपि (कः अपि > पालि को पि > प्राकृत को वि > अप० कोई हिन्दी कोई से विकसित होता है। कुछ का विकास विद्वानों ने इस प्रकार माना है – सं० किंचित > प्रा० किंचि > किंछि > किछु > कछु > कुछ 'किसी' को संस्कृत के 'कस्यापि' से उत्पन्न माना जाता है। 'किन्हीं' की उत्पत्ति 'केषामपि' से मानी जाती है।

विशेषण

जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की विशेषताएँ सूचित करते हैं उन्हें विशेषण कहते हैं जैसे–गोरा, काला, नीला, पीला, एक, दो आदि। संज्ञा और सर्वनामों की तरह विशेषण शब्दों में लिंग, वचन और कारक के कारण रूपांतर होते हैं। रूप रचना की दृष्टि से विशेषण दोनों (विकारी और अविकारी) ही वर्गों में आते हैं। अविकारी विशेषणों के रूप अपरिवर्तित रहते हैं। यथा–सुंदर, चंचल, गोल, लाल आदि। विकारी के रूपांतर होते है इसके नियम निम्नलिखित है–

1. कुछ आकारांत विशेषणों में विशेष्य (संज्ञा) के लिंग–वचन बदलने के कारण रूपांतरण होता है। जैसे –

	एकवचन	बहुवचन	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
विभक्ति रहित	उजला (कपड़ा)	उजले (कपड़े)	उजला (कपड़ा)	उजली (धोती)
विभक्ति सहित	उजले (कपड़े से)	उजले (कपड़ों से)	उजले (कपड़े से)	उजली (धोती से)

इसी प्रकार–बड़ा नगर, बड़ी नगरी, बड़े नगरों में। किन्तु यह परिवर्तन कुछ आकारांत पुल्लिंग विशेषणों में ही आता। अन्य प्रकार के विशेषणों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। जैसे–योग्य लड़का, योग्य लड़के, काला घोड़ा, काली घोड़ी, मोटा ग्रंथ, मोटी पुस्तक आदि। श्वेत घोड़ा, श्वेत घोड़ी, श्वेत घोड़े में कोई परिवर्तन नहीं है।

2. तत्सम विशेषण में भी रूप परिवर्तन नहीं होता जैसे अति सुन्दर लड़का, अति सुन्दर लड़की आदि। तद्‌भव में रूप परिवर्तन होता है। जैसे – बड़ा चतुर लड़का, बड़ी चतुर लड़की।

3. कई बार विशेषणों को ही संज्ञा रूप में प्रयुक्त किया जाता है। यथा–वीरों की पूजा होती है, बड़ों का सम्मान होना चाहिए आदि। वीरों, बड़ों शब्द यद्यपि विशेषण हैं लेकिन संज्ञा की भाँति प्रयुक्त होने के कारण इनके लिंग, वचन, कारक भी संज्ञा शब्दों की तरह रूपांतरित होते हैं।

4. हिन्दी विशेषणों में कोई परसर्ग प्रयुक्त नहीं होता। केवल विशेष्यों में ही परसर्ग का प्रयोग होता है। जैसे राम ने बहुत सुन्दर वस्त्र पहने हैं।

5. हिन्दी में तुलनात्मक विशेषणों में से, से अधिक, से भी अधिक, अपेक्षा, सामने, सबसे, सबमें आदि का व्यवहार होता है। राम, शाम से अधिक बुद्धिमान है, मोहन, गीता से तेज है, मोहन और गीता की बुद्धिमानता के सामने कोई टिक नहीं सकता, सुरेन्द्र की अपेक्षा नरेन्द्र बहुत होशियार है।

संख्यावाचक :

संख्यावाचक विशेषण से संख्या का बोध होता है तीन लड़के, तीन बंदर, नौलखा हार, पौने दो रूपये, दुगुना आदि। संख्यावाचक विशेषण की उत्पति और वर्गीकरण इस प्रकार हैं।

संख्यावाचक विशेषणों का वर्गीकरण

इस विशेषण के पांच भेद हैं–

1. पूर्ण संख्यावाचक
2. अपूर्ण संख्यावाचक
3. क्रम संख्यावाचक
4. आवृत्ति संख्यावाचक
5. समूह संख्यावाचक

1. पूर्ण संख्यावाचक की व्युत्पत्ति :

एक – सं० एकः > प्रा. एको > अपभ्रंश एक्क > हिन्दी एक

दो – सं० द्वौ > प्रा. दे > अप० दो > हि. दो

तीन – सं० त्रीणि > प्रा. तिण्णि > हिन्दी तीन

चार – सं. चत्वारि > प्रा. चतारि > प्राचीन हिन्दी चारि > हिन्दी चार

पाँच – सं. पञ्च > प्रा. पंच > अप० पाँच > हि. पाँच

छह – सं. षट् > प्रा. शट > छट् > छट

सात – सं. सप्त > प्रा. सत्र > अप. सत्र > सात

आठ – सं. अष्ट > प्रा. अट्ठ > अप. अट्ठ > हिन्दी आठ

नौ – सं. नव > प्रा. णव > अप. नउ > हिन्दी नौ

दस – सं. दश > प्रा. दस > अप. दस > हिन्दी दस

बीस – सं. विशंति > प्रा. बीसइ > अप. बीस > हि. बीस आदि

2. अपूर्ण संख्यावाचक

पाव – सं. पाद > प्रा. पाओ > अप. पाउ > हि. पाव

चौथाई – सं. चतुर्दिक > प्रा. चउतिथअ > चौथाई (257)

तिहाई – सं. त्रिभागिक > प्रा. तिहाइअ > हिन्दी तिहाई

आधा – सं. अर्ध > अद्ध > आध > आधा

पौन – सं. पादोन > पाओण > पाउण > पौना

सवा – सं. सपाद > सवाऊ > सवा

डेढ़ – सं. द्वयर्ध > दिवड्ढ > दिअड्ढ > डेढ़

ढाई – सं. अर्थतृतीय > अड्ढेदअ > ढढाई > ढाई

साढे – सं. सार्ध > सड्ढ > साढ़े

3. क्रमसंख्यावाचक

पहला – सं. प्रथमः > पहिनो > पहिलो > पहिला > पहला

अगला – सं. अग्रिम > अग्गिनो > अग्गिलो > अगिझा > अगला

दूसरा – सं. द्वितीयक > दूसरो > दूसरा

तीसरा – सं. तृतीयक > तीसरो > तीसरा

चौथा – सं. चतुर्थक > चउत्यओ > चउत्थअ > चौथा

पांचवा – सं. पंञ्चम > पञ्चमो > पंचमां > पँचवाँ > पाँचवाँ

4. आवृत्तिवाचक विशेषयों की व्युत्पत्ति

बार – सं. वार > बार

दूना – सं. द्विगुण > दुगुना > दुउना > दूना

दुहरा – सं. द्विविध > दुविह > अप. दोहउउ

तिया – सं. त्रिक > त्रिका > तिगा > तिआ > तिया

5. समूह वाचक विशेषण

एक्का – सं. एक्कः > एक्को > एक्का > इक्का

दुक्का – सं. द्विक > दुको > दुका > दुक्का

तिक्का – सं. त्रिकः > तिक > तिक्का

चौका – सं. चतुष्कः > चउष्को > चउको > चौका

पचा – सं. पञ्चकः > पच्चओ > पच्च > पचा

सैंकड़ा – सं. शतकः > सैंकड़ा

क्रिया

क्रिया किसी भी भाषा की व्याकरणात्मक संरचना के विश्लेषण में सहायक होती है। क्रिया के विभिन्न रूपों में जो तत्व समान होता है, उसे धातु कहते हैं। जैसे–चलता है, चला, चल रहा है, चलेगा आदि क्रिया रूपों में 'चल' अंश समान रूप में विद्यमान है। यही 'चल' इन क्रियाओं की धातु है। हिन्दी धातुओं का मूल स्त्रोत संस्कृत भाषा में मिलता है। जैसे कृ से कर, पठ से पढ़, या से जा आदि। भाषा वैज्ञानिकों ने हिन्दी की धातु–प्रक्रिया के विविध अंगों पर विचार करते हुए उसका विश्लेषण किया है। वास्तव में हिन्दी में आकर बहुत ही कम धातुएँ प्रयोग में आती है जबकि संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश काल में इनकी संख्या बहुत

अधिक थी। हिन्दी के अन्तर्गत जिन धातुओं का प्रयोग किया जाता है उनको तीन वर्गों में विभक्त किया जाता है–

1. **मूल धातु** - मूल धातु को ही सिद्ध अथवा शुद्ध धातु कहा जाता है। जो धातु अपने परम्परागत रूप से प्रचलित हैं उन्हें मूल धातु कहा जाता है। जैसे–चल् से चल, पठ् से पढ़, हस् से हँस, चष से चख।

2. **यौगिक धातु** - जो धातु विभिन्न शब्दों से निर्मित है, उन्हें यौगिक (साधित) धातु कहा जाता है। दूसरे शब्दों में मूल धातु में जब किसी प्रत्यय का योग होता है, तब उसे यौगिक धातु कहा जाता है। यथा–पढ़ से पढ़ाना, चल+आ चला, चलाना आदि। यौगिक धातुओं में मुख्यतः प्रेरणार्थक, नामधातु और ध्वन्यात्मक धातुएँ आती हैं। हिन्दी धातुओं को रेखाचित्र के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

हिन्दी धातुएँ

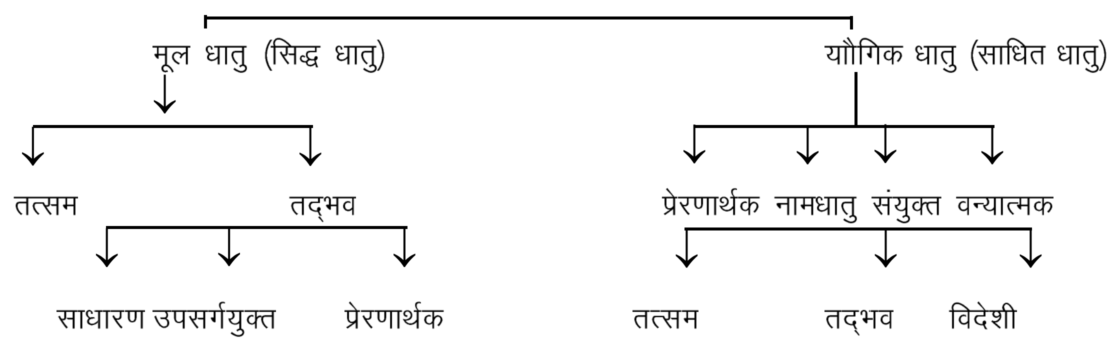

हिन्दी क्रिया के मुख्य प्रकार

1. अकर्मक क्रिया

ऐसी धातु जिसके साथ कोई कर्म आवश्यक नहीं होता; जैसे–दौड़, नहा, से, चल, हँस, खेल आदि। पक्षी उड़ते है, मैं सोता हूँ आदि।

2. सकर्मक क्रिया

जिस धातु से सूचित होने वाला व्यापार का फल कर्त्ता से निकलकर किसी दूसरी वस्तु पर पड़ता है या जिसमें कर्म आवश्यक हो उसे सकर्मक क्रिया कहते है; जैसे – 'सिपाही चोर को पकड़ता है।'

कोई–कोई धातु अकर्मक और सकर्मक दोनों होते है जैसे खुजलाना, भरना, लजाना, भूलना, बदलना, ऐठना, ललचाना, घबराना इत्यादि।

धातुओं के प्रकार

1. मूल धातु

इन धातुओं का मूल हमें प्राचीन आर्यभाषाओं में मिलता है। हिन्दी भाषा शास्त्रियों ने इस के 393 रूप माने

हैं। इस को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है–

1. साधारण धातुएँ – यथा 1. कर (ना) (< सं. कृ);
2. काँप (ना) (< सं. कम्प)
3. काट (ना) (< सं. कृत)
4. दे (ना) (< सं. दा)
5. नाच (ना) (< सं. नृत)
6. पूछ (ना) (< सं. पृच्छ)
7. पढ़ (ना) (< सं. पठ्)
8. दे (ना) (< सं. दा)
9. रख (ना) (< सं. रख)
10. सुन (न) (< सं. सुण)

2. उपसर्ग युक्त धातुएँ

इसके अन्तर्गत वे धातुएँ आती हैं जिनका रूप उपसर्गों के योग से बना हुआ है यथा–

1.	उग् (ना)< (सं. उत्/गम्)	2.	निवाह (ना) < (नि/वह)
3.	निरख (ना) < (सं. निर्/ईक्ष)	4.	पखार (ना) < (प्र/क्षात्)
5.	पा (ना) < (प्र/आप)	6.	बेच (ना) < (वि/कृ)
7.	सौंप (ना) < (सम्/अर्प)	8.	उतर् (ना) < (उत्/तृ)
9.	परख (ना) < (पार/ईक्ष्)	10.	उजड़् (ना) < उत्/जट्)

3. प्रेरणार्थक धातुएँ :

जब क्रिया से यह पता चलता है कि कर्ता कार्य को स्वयं न करके किसी दूसरे को उस कार्य को करने की प्रेरणा देता है उसे प्रेरणार्थक धातु कहते हैं। प्रेरणार्थक रूप में लाने के लिए इनमें पुनः 'आ' या 'वा' का प्रयोग करना पड़ता है। यथा–करवाना, चमकाना, बुलवाना आदि (i) /मार (ना) < (सं. मारयति गिजन्त) (सकर्मक), वह साँप को लाठी से मारता है; इसका हिन्दी में प्रेरणार्थक रूप/मरवाना होगा। (ii) /मर् (ना) (अकर्मक) जो पैदा होता है, वह अवश्य मरता है। (iii) /उखाड़ (ना) < (सं. उत्खाय्यति), (iv) /छा (ना) ढकना < (सं. छाद्यति) (v) /तार (ना) < (सं. तारयति) (vi) /हार (ना) < (सं. हारयति)

कुछ धातुएँ संस्कृत के मूल रूप में ही चली आ रही हैं हिन्दी में उनके तत्सम और तद्भव रूप का प्रयोग होता आ रहा है जैसे–अरप (</अर्प्), अर्पित करना; अरज (</अर्ज) अर्जन करना; गरज् (</गर्ज) गरज करना, गरजना; तज् (</त्यज) छोड़ना, रच् (</रच्) रचना करना आदि।

हिन्दी में ऐसी धातुओं का भी प्रयोग होता है जिनकी व्युत्पत्ति संस्कृत से नहीं प्रतीत होती। जैसे–/टोह (ना), /टोक (ना), /ठोक (ना), ठेल (ना), ढांक (ना), /पटक् (ना), फड़क् (ना) आदि।

2. यौगिक धातु

णिजन्त या प्रेरणार्थक धातुएँ यौगिक धातुएँ हैं। क्रियापदों के प्रयोग की दृष्टि से इनके दो रूप हैं–तिङन्तीय, कृदन्तीय। संस्कृत में तिङन्तीय रूपों की प्रधानता थी। संस्कृत में दस लकारों में विविध रूप तिङन्तीय है। इनके प्रयोग मे वचन, भाव, पुरुष आदि का ध्यान रखना पड़ता था। हिन्दी में इनका अभाव है। हिन्दी के अन्तर्गत प्रयुक्त होने वाली यौगिक धातुओं को निम्नलिखित पांच रूपों में विभक्त किया जा सकता है–

(i) आ या वा का संयोग – /कर–करा, /पढ़–पढ़ा, /करवा (ना), /गढ़वा (ना), /चल (ना), /सुनवा (ना), /चलवा (ना), /उठवा (ना) आदि।

(ii) धातु को छोड़ कर दूसरे शब्दों में प्रत्यय जोड़ने से जो धातु बनाए जाते हैं, उन्हें नाम धातु कहते हैं। ये संज्ञा या विशेषण के अंत में 'ना' जोड़ने से बनते हैं। जैसे–शर्म > /शर्मा (ना), /गर्मा (ना), /लुभा (ना), /झगड़ (ना), /हथिया (ना), /पतिआ (ना), /बतिआ (ना), /सूख् (ना) आदि

(iii) तीसरी मिश्रित या संयुक्त धातुएं हैं। इन धातुओं का निर्माण या तो धातुओं के संयोग से होता है अथवा किसी धातु के पूर्व किसी संख्या, क्रियाजात विशेष्य अथवा कृदंत पदों को जोड़कर होता है। जैसे–बाँट देना, कह सकना, जान लेना, जाने देना, उठा देना, कर जाना आदि प्रत्यय युक्त धातु–/अटक् (ना) < (सं. आर्त+/कृ), /चूक् (ना) < (सं. च्युत+/कृ) /थूक् (ना) < (सं. थूक/कृ) आदि।

(iv) चौथी प्रकार की धातुओं को ध्वन्यात्मक अथवा अनुकरणात्मक धातु भी कहते हैं। यह धातुएँ नामधातु के अन्तर्गत आती हैं। यथा–/कट्कटा (ना), /खटखटा (ना), /खनखना (ना), /झनझना (ना), /गर्ज् (ना), /तज् (ना), /बरज् (ना) आदि।

(v) पाँचवी प्रकार को 'विदेशी धातु' कहा जाता है क्योंकि इनकी व्युत्पत्ति संस्कृत से सिद्ध नहीं होती। यथा–/अहं (ना),/चौंक (ना), /छोड़ (ना), झाँक (ना), /झाड़ (ना), /टाँग (ना) आदि।

3. कृदंत धातुएँ

कृदंत वे शब्द हैं, जिनके अंत में कृत् प्रत्यय लगता है। कृत् उसे कहते हैं जो विशेषण और संज्ञा की रचना के लिए जोड़े जाते हैं। इन कृत प्रत्ययों के संयोग से जिन क्रियापदों का निर्माण होता है उन्हें कृदंत की संज्ञा दी जाती है। सभी रूपों में धातु का आभास अवश्य मिलता है। जैसे भागता, हँसता, चलता आदि में धातु की विद्यमानता स्पष्ट है। कृदंत मुख्यतः पाँच रूपों में प्रयुक्त होता है –

1. वर्तमानकालिक कृदंत : में 'ता', ते, ती प्रत्यय लगता है जैसे चल+ता = चलता
2. भूतकालिक कृदंत : में 'आ' ई प्रत्यय लगता है जैसे पढ़+आ = पढ़ा, चला, हँस गई
3. पूर्वकालिक कृदंत : में 'कर' या करके प्रत्यय लगता है जैसे चल+कर = चल कर

4. कर्तृ वाचक कृदंत : में न, ना, वार, हार प्रत्यय का प्रयोग होता है जैसे– दह+न = दहन, कर+ना =करना, रख+वार = रखवार आदि।

5. विध्यर्थक कृदंत : ना, ने, नी का प्रयोग होता है जैसे कह+ना = कहना, उसका कहना है कि सीता बहुत होशियार लड़की है।

कर+नी = करनी – कथनी और करनी में अन्तर नहीं होना चाहिए।

4. संयुक्त क्रिया :

एक साथ एक से अधिक क्रिया का प्रयोग होना जैसे वह पढ़ता चला गया; वह खाना खा चुका है। फेंक देना, खा जाना, पी लेना, जा सकना, पढ़ सकना, खाने लगना, करने पाना, सोती रहना।

5. सहायक क्रिया :

जो क्रिया मुख्य क्रिया की सहायता करे जैसे वह खेलता रहा है। इस वाक्य में खेलता मुख्य क्रिया और 'है' सहायक क्रिया है। विद्वानों ने इन को सहायक क्रिया माना है – हो, आ, आना, उठना, करना, चाहना, चुकना, जाना, डालना, देना, रहना, लगना, लेना, पाना, सकना, बैठना, पड़ना, होना आदि।

काल :

क्रिया के उस रूपांतरण को काल कहते हैं, जिससे क्रिया के व्यापार का समय तथा उसकी पूर्ण वा अपूर्ण अवस्था का बोध होता है जैसे–मैं जाता हूँ (वर्तमान काल), मैं जाता था (भूतकाल), मैं जाऊँगा (भविष्यतकाल) अर्थ की पूर्णता और अपूर्णता के आधार पर भाषा वैज्ञानिकों ने 16 भेद माने हैं यथा–मैं चलता हूँ, मैं चलूँ, अगर मैं चलूँ, मैं चला हूँ, मैं चलता होऊँ, मैं चला होउँ (वर्तमान काल के क्रमशः अपूर्ण, आज्ञार्थ, संभावनार्थ, पूर्ण, अपूर्ण संभाव्य, पूर्ण संभाव्य के विभिन्न रूप) इसी प्रकार अन्य कालों के भेद किये जा सकते हैं।

अर्थ :

अर्थ से तात्पर्य क्रिया की स्थिति से है। कामता प्रसाद गुरू के अनुसार क्रिया के रूपों से केवल समय की पूर्ण अवस्था ही का बोध नहीं होता बल्कि निश्चय, संदेह, संभावना, आज्ञा, संकेत आदि का भी बोध होता है। यथा–

निश्चयार्थ	–	लड़का आता है, राम गया, क्या तुम कल आओगे।
संदेहार्थ	–	लड़का आता होगा वह परीक्षा में शायद ही सफल हो।
संभावनार्थ	–	शायद आज वर्षा होगी।
आज्ञार्थ	–	तुम जाओ, वहाँ मत जाना।
संकेतार्थ	–	यदि आप पढ़ते होते तो कभी फेल नहीं होते।

वाच्य :

वाच्य क्रिया का वह रूप है जिससे जाना जाए कि क्रिया का मुख्य विषय कर्ता है या कर्म या भाव। इसके आधार पर ही इसके तीन प्रकार बताए गये हैं–कर्तृवाच्य, कर्म वाच्य, भाव वाच्य।

(क) कर्तृवाच्य : यहाँ क्रिया का सम्बन्ध कर्त्ता से हो। जैसे–राम पढ़ता है।

(ख) कर्मवाच्य : यहाँ क्रिया का सम्बन्ध कर्म से हो। जैसे – चिट्ठी भेजी गई।

(ग) भाववाचक : यहाँ क्रिया का सम्बन्ध न कर्ता से न, न कर्म से हो बल्कि भाव से हो। जैसे–धूप में चला नहीं जाता।

पाठ संख्या- 2.3

हिन्दी वाक्य, पदक्रम और अन्विति और हिन्दी की संवैधानिक स्थिति, मानकीकरण

वाक्य भाषा की सबसे छोटी इकाई होती है और इसकी रचना सार्थक ध्वनियों से होती है। जो भाव और अर्थ को अभिव्यक्त करने में पूर्व होती है। आचार्य पतंजलि ने पूर्ण प्रतीति कराने वाले शब्द समूह को वाक्य माना है। डॉ० हरदेव बाहरी ने शब्दों की सार्थकता वाक्य प्रयोग में ही मानी है। वाक्य संरचना में वाक्य के आधार गठन, क्रम, अंग, भेद और वाक्य बनाने की प्रक्रिया का अध्ययन और विश्लेषण ऐतिहासिक और तुलनात्मक दृष्टि से किया जाता है। भारतीय आचार्यों ने वाक्य–गठन में पाँच आधार आवश्यक माने हैं :–

1. सार्थकता : वाक्य के लिए सार्थक शब्दों का होना अति आवश्यक है।
2. योग्यता : प्रयुक्त शब्दों में प्रसंगानुकूल अर्थबोध की क्षमता का नाम ही योग्यता है। दूसरे शब्दों में शब्दों की आपसी संगति ही योग्यता है।
3. आकांक्षा : वाक्य को पढ़ने के पश्चात् उसके पूर्ण अर्थ को जानने की इच्छा ही अकांक्षा है। जैसे–वो जा रहा है, वाक्य को पढ़ने के पश्चात् इच्छा उत्पन्न होती है क्हाँ, क्यों जा रहा है।
4. सन्निधि या : आसत्ति सन्निधि का अर्थ है–समीपता। वाक्य में प्रयुक्त (क्रिया, विशेषण आदि) पद इस प्रकार समीप होने चाहिए कि अर्थ में किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न न हो।
5. अन्विति : वाक्य में व्याकरणिक दृष्टि से एकरूपता को ही अन्विति कहते हैं। यह एकरूपता, समानरूपता प्रायःचन, कारक, लिंग और पुरुष की दृष्टि से होती है। जैसे 'सीता गये' और 'राम जा रही है' वाक्यों में अन्विति नहीं है।

वाक्य के अंग :

वाक्य के दो अंग होते हैं–उद्देश्य और विधेय। कर्त्ता और क्रिया को ही क्रमशः उद्देश्य और विधेय कहा जाता है। वाक्य में जिसके विषय में कुछ कहा जाए, वह उद्देश्य कहलाता है। उद्देश्य के विषय में जो कुछ बताया जाता है उसे विधेय कहते हैं जैसे–राम अभी घर गया है। इस वाक्य में 'राम' उद्देश्य है और अभी घर गया हैं विधेय है।

वाक्य के भेद :

(क) अर्थ के अनुसार वाक्य के आठ भेद हैं जिनका संक्षिप्त रूप में परिचय इस प्रकार है :–

1. विधानवाचक – जिनमें क्रिया के करने का सामान्य विधान है जैसे–मैं कल दिल्ली जाऊँगा।
2. निषेधात्मक – जिन वाक्यों में नकारात्मकता होती है–मुझे कुछ नहीं चाहिए।
3. प्रश्नवाचक – जिसमें प्रश्न किया जाये। क्यों, क्या, कैसे।
4. विस्मयादिवाचक – जिसमें हर्ष, शोक, घृणा आदि भावों की अभिव्यक्ति है।
5. आज्ञावाचक – किसी को आज्ञा, आदेश या उपदेश दिया जाता है।
6. इच्छावाचक – जिसमें इच्छा, शुभकामना और आशीर्वाद प्रकट होता है।
7. संदेहवाचक – जिसमें संदेह, शंका और संभावना रहती है।
8. संकेतवाचक – जिसमें संकेत अथवा शर्त रहती है। जैसे–आप कहें तो मैं वहाँ जाऊँ, पानी न बरसता तो सूखा पड़ जाता।

(ख) रचना के आधार पर

रचना के आधार पर वाक्य के तीन भेद हैं :

1. सरल या साधारण वाक्य

सरल या साधारण वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय होता है जैसे राम हँसता है।

2. मिश्र वाक्य

मिश्र वाक्य में एक प्रधान सरल उपवाक्य होता है और एक या अनेक आश्रित सरल उपवाक्य होते हैं। दोनों एक दूसरे के पूरक होते हैं। जैसे–जब मैं आया तब आप जहाँ से चली गई। इस वाक्य के समुच्चयबोधक हैं–कि, जो, क्योंकि, यदि..., तो, जब.....तब, यद्यपि.....तथापि इत्यादि।

3. संयुक्त वाक्य

जिस वाक्य में एक से अधिक प्रधान वाक्य हों जैसे हम दिल्ली गये और वहाँ दो दिन रहे। इस वाक्य में दोनों स्वतंत्र वाक्य हैं यदि दो या दो से अधिक स्वतंत्र वाक्यों के साथ कोई आश्रित वाक्य के साथ ही उपवाक्य जुड़ा हो तो भी वह सम्पूर्ण वाक्य संयुक्त वाक्य होता है जैसे–वह आया और उसने देखा कि भीतर कोई है।

वाक्य रचना के आधार या वाक्य-विन्यास

वाक्य रचना के आधार पद होते हैं क्योंकि पदों को क्रम से रखने और उन पदों का परस्पर सम्बंध स्पष्ट करने से ही वाक्य की रचना होती है अतः वाक्य विन्यास के अन्तर्गत दो विषय आते हैं–पदक्रम और अन्विति

(i) पदक्रम :

वाक्य के विभिन्न घटक जब एक पद्धति के अनुसार एक सुनिश्चित क्रम में आते हैं, स्वतंत्र न होकर एक दूसरे से संबंधित होते हैं, उसे पदक्रम कहते हैं। पदक्रम से भाषा की आन्तरिक व्यवस्था का गठन होता है और अर्थ

की प्रतीति में भी सहायता मिलती है। चीनी आदि स्थान प्रधान भाषाओं में तो यह बहुत ही महत्वपूर्ण है, किन्तु अंग्रेजी, हिन्दी आदि वियोगात्मक भाषाओं में भी इसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता। इनमें पदों का स्थान और क्रम निश्चित होता है। जैसे–हिन्दी में कर्ता पहले और कर्म बाद में और क्रिया अन्त में आती है। इसके विपरीत अंग्रेजी में कर्ता, क्रिया और कर्म का क्रम मिलता है। उदाहरण देखिए–

बालक विद्यालय गया

कर्ता कर्म क्रिया

Mohan go to the School.

Subject Verb Object

भाषा शास्त्री कामताप्रसाद गुरु और डॉ० हरदेव बाहरी पदक्रम के नियमों को इस प्रकार बताते हैं–1. कर्ता पहले, और फिर कर्म या पूर्ति और अंत में क्रिया आती है। 2. यदि दो कर्म हों तो गौण कर्म पहले और मुख्य कार्य पीछे आता है जैसे–उसने राम को फल दिये। 3. कर्ता, कर्म या क्रिया के विशेषक अपने–अपने विशेष्य से पहले आते हैं जैसे राम के छोटे भाई ने अपने दोस्त प्रेम को पके–पके फल तुरन्त ला दिये। 4. कर्ता का विशेषण विधेय के पूरक के रूप में भी आ सकता है जैसे मोहन अच्छा है। वह बालक सदाचारी है। 5. सर्वनाम के पहले विशेषण नहीं आ सकता। 6. स्थान–वाचक या कालवाचक क्रियाविशेषण कर्ता के पहले या ठीक पीछे रखे जाते हैं। जैसे–आज मौसम अच्छा है। 7. निषेधार्थक क्रिया विशेषण (न, नहीं, मत) क्रिया से पहले आते हैं। जैसे–मैं यह कार्य नहीं कर सकती। 8. प्रश्नवाचक सर्वनाम क्रिया से पहले आते हैं जैसे–आप कहाँ जा रहे हैं? आदि। 9. पूर्वकालिक क्रिया मुख्य क्रिया से पहले आती है, ''मैं सोकर आया हूँ' बल प्रदर्शन के लिए कर्ता के पहले भी प्रयोग होता है– 'चलकर तुम देखो।' संबोधन वाक्य के प्रारम्भ में कभी–कभी अंत में आता है–राम कहाँ चलें? बैठो दोस्त। 10. विस्मयबोधक प्रायः आरम्भ में आते हैं, हाय! ये क्या हो गया, 'अरे! तुम यही हो'। 11. 'मात्र' पहले भी आता है और बाद में भी–मात्र दस रूपये चाहिए, दस रूपये चाहिए मात्र। 12. जिस पर बल देना हो उसके बाद–ही, भी, तो, तक, भर आता है। 13. वाक्य के विविध अंगों में तर्कसंगत निकटता होनी चाहिए, जैसे –'एक पानी का गिलास लाओ' में 'एक पानी' निरर्थक है, 'पानी एक गिलास लाओ' सार्थक है। 14. आश्रित उपवाक्य को उस शब्द के निकट रहना चाहिए जिसके विशेषता इसमें बताई जाय; जैसे–मैंने, फिर कहा उसे आने दो। 15. द्वन्द्व समास में एक क्रम होता है। अधिक महत्वपूर्ण या आकार में छोटा शब्द पहले रखा जाता है, जैसे–सोना–चांदी, नर–नारी, दस–बीस, लड़ना–झगड़ना, बात–चीत, देख–भाल।

भाव की तीव्रता को प्रकट करने के लिए या वाक्य के किसी अंश विशेष पर बल देने के लिए साधारण पदक्रम में उलट–फेर हो जाता है; जैसे–करता क्या है वह? वहाँ अवश्य जाएंगे, आप, करता ही नहीं, कुछ भी। चल रहा था, वह पीछे–पीछे आदि। कविता में तो यह पदक्रम परिवर्तन प्रायः देखा जाता है, यथा–

आ रही हिमालय से पुकार

है उद्धि गरजता बार–बार

(ii) अन्विति

अन्वय का शब्दिक अर्थ है–मेल। वाक्य के विविध व्याकरणिक रूपों की पारस्परिक एकरूपता अथवा मेल को अन्वय कहते हैं। यह एकरूपता लिंग, वचन, पुरुष तथा मूल और विकृत रूप की होती है। विभिन्न भाषाओं में विशेषण–विशेष्य, कर्ता–क्रिया आदि में एकरूपता दिखाई देती है। यहाँ दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक है कि हर भाषा के अन्वय के नियम अलग–अलग होते हैं और दूसरा भिन्न–भिन्न भाषाओं में भिन्न–भिन्न बातों का अन्वय होता है। यथा–संस्कृत में कर्ता–क्रिया में लिंग का अन्वय नहीं है, किन्तु हिन्दी में है :

रामः पठति – राम पढ़ता है।

सीता पठति – सीता पढ़ती है।

ऐसे ही हिन्दी के विशेषण में भी वचन तथा लिंग का अन्वय है किन्तु अंग्रेजी में नहीं। यथा –

अच्छा लड़का – Good Boy

अच्छी लड़की – Good Girl

अच्छे लड़के – Good Boys

हिन्दी में क्रिया कभी कर्ता के अनुरूप होती है–मोहन गया, सीता गई। कभी कर्म के अनुसार–राम ने केला खाया, सीता ने रोटी खाई। कभी–कभी नहीं–लड़के ने लड़की को मारा, लड़की ने लड़के को मारा। इसी प्रकार मूल विकृत रूप की भी विशेषण, विशेष्य में अनुरूपता होती है–वह काला कपड़ा उठाओ, उस काले कपड़े को उठाओ। अर्थात् क्रिया, वाक्य के कर्त्ता या कर्म के अनुरूप होती है।

हिन्दी वाक्यों में कर्ता या कर्म के साथ क्रिया का, विशेष्य के साथ विशेषण और संज्ञा के साथ सर्वनाम या अन्वय होता है। इनमें से कर्ता और कर्म के साथ क्रिया की अन्विति सर्वाधिक महत्वपूर्ण और जटिल है। हिन्दी कर्ता या कर्म के साथ अन्विति करते समय निम्नांकित बिन्दुओं को ध्यान में रखना पड़ता है –

(i) क्रिया – काल, विधि

(ii) काल – भूत, वर्तमान, भविष्यत्

(iii) लिंग – पुलिंग, स्त्रीलिंग

(iv) वचन – एक वचन, बहुवचन

(v) प्रयोग का अर्थ – सामान्य या आदरार्थ

(vi) विभक्ति – ऋजु, त्रिर्यक्

(vii) पुरुष – उत्तम, मध्यम, अन्य।

अन्वय की प्रमुख स्थितियाँ इस प्रकार हैं।

(i) कर्ता-क्रिया का अन्वय

अप्रत्यय कर्ता में क्रिया कर्तानुसार होती है–लड़की कपड़ा सिल रही है। ऐसी स्थिति में कर्म, क्रिया को

प्रभावित नहीं करता। कर्ता के साथ ने, को, से आदि कारक चिन्ह लगे होने पर कर्तानुसार क्रिया नहीं आती, जैसे–राम ने रोटी खाई, सरिता ने रोटी खाई। यहाँ कर्म के वचन, लिंग के अनुरूप क्रिया होगी। कर्ता के प्रति आदर अभिव्यक्ति की स्थिति में एकवचन कर्ता के साथ बहुवचन की क्रिया आती है; जैसे पिता जी आ रहे हैं। यदि कारक चिन्ह रहित कई कर्ता एक ही लिंग, वचन, पुरुष से और तथा एवं आदि से जुड़े हो तो क्रिया उसी लिंग की आएगी, किन्तु बहुवचन में–जैसे राम, मोहन और श्याम भोजन कर रहे हैं। किन्तु यदि ऐसे कई शब्द मिलकर एक ही वस्तु बोध करा रहे हैं तो क्रिया एकवचन में होगी।

(ii) कर्म और क्रिया का अन्वय

कर्ता के कारक चिन्ह युक्त होने पर क्रिया कर्तानुरूप होती है–राम ने रोटी खाई, राम ने आम खाया। कर्म के अनुसार क्रिया तभी होगी जब कर्म कारक चिन्ह विहीन हो। यदि कारक चिन्ह हुआ तो क्रिया उसके अनुरूप नहीं होगी, जैसे–सीता ने उस चिट्ठी को पढ़ा। कर्ता के साथ कारक चिन्ह के अभाव की स्थिति में क्रिया कर्म का अनुसरण नहीं करेगी–राम रोटी खा रहा है। यदि कई कर्म विभाजक समुच्चयबोधक के द्वारा जुड़े हों, तो क्रिया अंतिम कर्म के अनुसार होती है; जैसे–तुमने टोपी या कुर्ता लिया होगा।

(iii) कर्ता, कर्म से निरपेक्ष क्रिया

कर्ता और कर्म दोनों के साथ कारक चिन्ह होने पर क्रिया हमेशा पुल्लिंग एक वचन में आती है जैसे–किरण ने सूर्य को देखा, सूर्य ने किरण को देखा।

(iv) विशेषण और विशेष्य का अन्वय

विकारी (अर्थात आकारांत) विशेषण के लिंग–वचन विशेष्य के मूल अथवा विकृत कारकीय रूप के अनुसार होते हैं जैसे–काला घोड़ा, काले घोड़े पर, काली घोड़ी, काली घोड़ियां आदि 2. यदि विशेष्य मूल रूप में है तो अकारांत विशेषण भी मूल रूप में आता है यदि वह विकृत रूप में है तो विशेषण भी विकृत रूप में आता है। जैसे–'लंबा आदमी गया', लम्बे लड़के को बुलाओ। 3. विशेष्य विकृत रूप में हो, पर परिवर्तित न हो, तब भी विशेषण परिवर्तित हो जाएगा, 'पीला फूल खिला है, पीले फूल को तोड़ लो।' 4. यदि एक विशेष्य के अनेक विकारी विशेषण हो, तो सब उस विशेष्य के अनुसार होते हैं। जैसे–अच्छी और सस्ती चाय। गंदे और मैले कुचैले कपड़े। 5. यदि कर्म के साथ परसर्ग लगा हो, तो विधेयात्मक है विशेषण एकरूप पुल्लिंग एकवचन रहता है। जैसे–इन कमरों को या पुस्तकों को किसने गन्दा कर दिया?

(v) संज्ञा और सर्वनाम का अन्वय

सर्वनाम का वचन और पुरुष उस संज्ञा के अनुरूप होना चाहिए, जिसके स्थान पर इसका प्रयोग हो रहा है जैसे वह गई, वह गया। हम, तुम, आप, वे, ये आदि का अर्थ की दृष्टि से एकवचन के लिए भी प्रयोग होता, किन्तु इनका रूप बहुवचन ही रहता है जैसे–तुम कहाँ गये थे? लड़के ने कहा, हम तो यहीं थे। किसी वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में 'मैं' के स्थान पर 'हम' का प्रयोग होता है इसी प्रकार 'मेरा' 'हमारा' हो जाता है। तू, तुम, आप तीनों ही मध्यम पुरुष हैं, किन्तु इनका प्रयोग सम्बन्धित संज्ञा के अनुरूप होता है।

हिन्दी की संवैधानिक स्थिति, मानकीकरण

राजकाल चलाने के लिए किसी न किसी भाषा का आवश्यकता होती है। अपने समय में पालि, प्राकृत अथवा अपभ्रंश राजभाषा रही है। मुस्लिम शासनकाल में तीन सौ वर्षों तक उर्दू राजकाज की भाषा थी। मैकाले ने इंग्लैण्ड से आकर अंग्रेजी को प्रतिष्ठित किया। तब से उच्च स्तर पर अंग्रेजी और निम्नस्तर पर देशी भाषाएँ प्रयुक्त होती रहीं। राष्ट्रीय चेतना के विकास के साथ अपनी भाषा को राजपद दिलाने की मांग उठी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महर्षि दयानन्द सरस्वती, तिलक, महात्मा गांधी और बहुत से नेताओं ने अनुभव किया कि हमारे देश का राजकाज हमारी ही भाषा में होना चाहिये और वह भाषा हिन्दी हो सकती है। अतः उसे सामान्य या संपर्क भाषा के रूप में स्वीकार किया गया। इसके पीछे तर्क यह था कि हिन्दी सभी आर्यभाषाओं की सहोदरी है, यह संस्कृत की उत्तराधिकारी है और सभी भारतीय भाषाओं से सरल है।

हिन्दी की संवैधानिक स्थिति :

स्वतंत्रता के बाद यह अनुभव किया गया कि देश का राजकाज लोक की भाषा में हो, अतः राजभाषा के रूप में हिन्दी को एकमत से स्वीकार किया गया। 14 सितम्बर 1949 ई. को भारत के संविधान में हिन्दी को मान्यता प्रदान की गई। तब से राजकार्यों में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग का आरंभ होता है।

संघ की राजभाषा विषयक व्यवस्था :

धारा 120 - संविधान की धारा 120 के अनुसार संसद का कार्य हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जाता है। परंतु यथास्थिति लोक सभा का अध्यक्ष या राज्यसभा का सभापति किसी सदस्य को उसकी मातृभाषा में सदन को सम्बोधित करने की अनुमति दे सकता है। संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करें तो 15 वर्ष की अवधि के पश्चात् ''या अंग्रेजी में'' शब्दों का लोप किया जा सकता है।

धारा 210 - धारा 210 के अंतर्गत राज्यों के विधान मंडलों का कार्य अपने–अपने राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जा सकता है। परंतु यथास्थिति विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् या सभापति किसी सदस्य को उसकी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकता है। 15 वर्ष की अवधि के पश्चात् ''या अंग्रेजी'' में शब्दों का लोप किया जा सकता है।

धारा 343 - धारा 343 के अनुसार संघ राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी और अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा। शासकीय प्रयोजनों के लिए ''अंग्रेजी भाषा का प्रयोग 15 वर्ष'' की अवधि तक किया जाता रहेगा। परंतु राष्ट्रपति इस अवधि के दौरान किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के साथ हिन्दी भाषा का प्रयोग अधिकृत कर सकेगा। इसी धारा के अंतर्गत कहा गया है कि संसद उक्त 15 वर्ष की अवधि के पश्चात् विधि द्वारा अंग्रेजी भाषा का या देवनागरी अंकों का प्रयोग किन्हीं प्रयोजनों के लिए उपबन्ध कर सकेगी।

धारा 344 - इस धारा के अनुसार यह व्यवस्था दी गयी है कि इस संविधान के प्रारंभ से 5 वर्ष की समाप्ति पर ''राष्ट्रपति एक आयोग गठित करेगा'' जो निश्चित की जाने वाली एक प्रक्रिया के अनुसार राष्ट्रपति को सिफारिश करेगा कि किन शासकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग अधिकाधिक किया जा सकता है। इसी प्रकार का आयोग संविधान के प्रारंभ से 10 वर्ष की समाप्ति पर गड़ित किया जायेगा।

धारा 345 - इस धारा में यह व्यवस्था दी गई है कि राज्य का विधान मंडल, उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली या किन्हीं अन्य भाषाओं को या हिन्दी को शासकीय प्रयोजनों के लिए स्वीकार कर सकेगा। यदि किस राज्य को विधानमंडल ऐसा नहीं कर पायेगा तो अंग्रेजी भाषा का प्रयोग यथावत् किया जाएगा।

धारा 346 - इस धारा के अंतर्गत यह कहा गया है कि संघ द्वारा प्राधिकृत भाषा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में पत्र आदि की भाषा राजभाषा होगी। यदि कोई राज्य परस्पर हिन्दी भाषा को स्वीकार करेगा तो उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

धारा 347 - इस धारा के अनुसार संविधान में यह व्यवस्था दी गई है कि यदि कोई राज्य यह चाहता हो कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को उस राज्य की दूसरी भाषा के रूप में मान्यता दी जाय तो मांग करने पर राष्ट्रपति इसकी अनुमति दे सकता है।

धारा 348 - इस धारा में यह कहा गया कि जब तक संसद विधि द्वारा उपबन्ध न करे तब तक उच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) और प्रत्येक राज्य के उच्च न्यायालय (हाईकोर्ट) में सब तरह की कार्यवाही अंग्रेजी भाषा में होगी।

धारा 349 - इस धारा के अनुसार राज्य भाषा से संबंधित संसद यदि कोई विधेयक या संशोधन प्रस्तुत करे तो राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी लेनी पड़ेगी।

धारा 350 - इस धारा के अनुसार अल्पसंख्यक बच्चों की प्राथमिक शिक्षा उनकी मातृभाषा में दिये जाने की पर्याप्त सुविधा सुनिश्चित की जायेगी।

धारा 351 - इस धारा के अन्तर्गत यह निर्देश दिया गया है कि संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रचार बढ़ाये और उसका विकास करे।

आठवीं अनुसूची में 15 भाषाएँ गिना दी गई हैं–1. असमिया 2. उड़िया 3. उर्दू 4. कन्नड़ 5. कश्मीरी 6. गुजराती 7. तमिल 8. तेलुगु 9. पंजाबी 10. बंगला 11. मराठी 12. मलयालम 13. संस्कृत 14. सिंधी 15. हिन्दी।

राजभाषा विषयक प्रगति

1955 में राष्ट्रपति द्वारा यह आदेश जारी किया गया कि जनता के साथ पत्र–व्यवहार में प्रशासकीय रिपोर्टों, प्रस्तावों, संसदीय विधियों, सरकारी संधि पत्रों और करारनामों, अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहारों और अन्तर्राज्यों के कार्यों में हिन्दी के प्रयोग को अंग्रेजी के साथ बढ़ावा दिया जाये।

राजभाषा आयोग, 1955

1955 में ही राष्ट्रपति ने एक राजभाषा आयोग की नियुक्ति की जिसके 21 सदस्य थे। इस आयोग ने हिन्दी राजभाषा के प्रयोग के बारे में यह सुझाव दिया कि अंग्रेजी भाषा का ज्ञान आवश्यक होते हुए भी सार्वजनिक क्षेत्र में विदेशी भाषा का व्यवहार उचित नहीं है। हिन्दी सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है, यही सारे भारत का एक माध्यम है। चौदह वर्ष की उम्र तक भारत के प्रत्येक विद्यार्थी को हिन्दी का ज्ञान करा देना चाहिये। हिन्दी क्षेत्र के विद्यार्थियों को दक्षिण भारत की भाषा अनिवार्य रूप से सीखना चाहिये। भारत सरकार

के प्रकाशन अधिक से अधिक हिन्दी में प्रकाशित किये जाएँ। प्रतियोगिता परीक्षाओं में हिन्दी का एक अनिवार्य प्रश्न–पत्र रखा जाये। इसी प्रकार के अन्य सुझाव दिये गये किंतु खेद है कि आयोग के इन सुझावों के अनुसार सरकार ने हिन्दी भाषा के प्रचार–प्रसार के लिये कोई ठोस कदम नहीं उठाये। अंग्रेजी का प्रयोग चलता रहा।

संसद की राजभाषा समिति के सुझाव, 1959

राजभाषा आयोग के सिफारिशों पर विचार करने के बाद संसद की राजभाषा समिति ने यह सुझाव दिये कि जब तक कर्मचारी और अधिकारी हिन्दी का ज्ञान प्राप्त न कर लें वे अंग्रेजी में कार्य करते रहें। 1965 के बाद हिन्दी प्रधान भाषा हो और अंग्रेजी को सहभाषा का स्थान दिया जाय।

इन सुझावों का मतलब यही था कि अंग्रेजी राजभाषा बनी रहे।

राष्ट्रपति का आदेश, 1960

राजभाषा आयोग और संसद की राजभाषा समिति 1959 की सिफारिशों पर विचार करने के उपरांत राष्ट्रपति ने यह आदेश जारी किया कि जिन कर्मचारियों की उम्र 45 वर्ष से कम है उनको हिन्दी का प्रशिक्षण अनिवार्य बनाया जाये। सेनाओं में भरती के लिये परीक्षा का माध्यम अंग्रेजी बनी रहे। टंककों और आशुलिपिकों को हिन्दी में कार्य करने का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाये। एक वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली के निर्णय के लिए एक स्थायी आयोग स्थापित किया जाये। राजकाज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए गृह–मंत्रालय योजना तैयार करें।

इस आदेश के तहत दो आयोग स्थापित कर दिये गये। अनुवाद कार्य होने लगा और कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था होने लगी।

राजभाषा अधिनियम, 1663 (1967 में संशोधित)

संविधान में आश्वासन दिया गया था कि 1965 से सारा सरकारी कामकाज हिन्दी में होगा, परंतु सरकार की नीति के कारण ऐसा नहीं हो सका। अहिन्दी क्षेत्रों में विशेषतः बंगाल और तमिलनाडु में हिन्दी का घोर विरोध हुआ। इसकी प्रतिक्रिया हिन्दी क्षेत्र में हुई। इस भाषायी कोलाहल के बीच नेहरू जी ने आश्वासन दिया कि हिन्दी को एकमात्रा राजभाषा स्वीकार करने से पहले अहिन्दी क्षेत्रों की सम्मति प्राप्त की जावेगी और तब तक अंग्रेजी का हटाया नहीं जाएगा। इस आश्वासन को राजभाषा अधिनियम 1963 जो 1967 में संशोधित हुआ था, को कानून के रूप में पुष्ट किया गया। इस अधिनियम में यह व्यवस्था दी गई कि 1965 के बाद भी अंग्रेजी का प्रयोग होता रहेगा। जब तक कर्मचारी हिन्दी का कार्य साधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते तब तक हिन्दी के साथ अंग्रेजी का और अंग्रेजी के साथ हिन्दी का अनुवाद पत्र आदि में दिया जाए। इस अधिनियम के द्वारा यह भी कहा गया कि जब तक अहिन्दी भाषी राज्य अंग्रेजी को समाप्त करने का संकल्प नहीं करेंगे तब तक अंग्रेजी का प्रयोग चलता रहेगा।

संकल्प, 1968

1968 में दोनों सदनों में एक संकल्प पारित किया गया, जिसमें ज्ञापन द्वारा यह कहा गया कि भारत सरकार राज्यों के सहयोग से ''त्रिभाषा–सूत्र'' लागू करेगी, जिसमें हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी, अंग्रेजी और एक

आधुनिक भारतीय भाषा (दक्षिणी भाषा) और अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषा, अंग्रेजी और हिन्दी के अध ययन का संबंध किया जाए। परीक्षाओं में हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम के रूप में मान्यता दिलाई जाए।

राजभाषा नियम, 1976

28 जून, 1976 को राजभाषा अधिनियम जारी किया गया है। हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने के लिए बारह नियम निर्धारित किये गये हैं। आज भी इन्हीं नियमों के अनुसार सरकार की द्विभाषित नीति का अनुपालन हो रहा है। नियमों को संक्षेप में आगे दिया जा रहा है।

1. ये नियम केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों, केन्द्रीय सरकार के नियमों और कंपनियों पर लागू होते हैं।
2. देश भर के केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को तीन वर्गों में बांटा गया है–

क. **वर्ग के क्षेत्र** - उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा और दिल्ली–यह सारा हिन्दी भाषा भाषी प्रदेश है।

ख. **वर्ग के क्षेत्र** - पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र और केन्द्र शासित–चंडीगढ़ तथा अण्डमान निकोबार।

ग. **वर्ग के क्षेत्र** - शेष सब राज्य, अर्थात् पं. बंगाल, उड़ीसा, उत्तर पूर्वी क्षेत्र, द्रविड़ भाषी (दक्षिण) राज्य।

3.(क) क्षेत्र के केन्द्रीय सरकार के अथवा राज्य सरकार के किसी कार्यालय को या व्यक्ति को हिन्दी में ही पत्र लिखें जाएँ। यदि किसी को अंग्रेजी मे पत्र भेजा जाये तो उसका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाए।

(ख) क्षेत्र के कार्यालयों को सामान्यतः हिन्दी में पत्र भेजे जाएँ। यदि कोई पत्र अंग्रेजी में भेजा जाए तो हिन्दी अनुवाद अवश्य संलग्न किया जाए। यदि कोई किसी अन्य भाषा में पत्र व्यवहार चाहे तो पत्र के साथ हिन्दी अनुवाद भेजे जाएँ।

(ग) क्षेत्र के कार्यालयों को पत्र आदि अंग्रेजी में भेजे जाएँ।

4. क क्षेत्र के कार्यालयों में पत्रादि हिन्दी में भेजने का अनुपात सरकार निर्धारित करती रहेगी।
5. हिन्दी में कहीं से प्राप्त पत्रों के उत्तर हिन्दी में ही देने होंगे।
6. सभी दस्तावेज हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में साथ–साथ निकाले जाएंगे और इसका उत्तरदायित्व दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी का होगा।
7. कोई व्यक्ति आवेदन या अपील हिन्दी या अंग्रेजी में दे सकता है। यदि आवेदन या अपील हिन्दी में हो या उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर हैं तब उसका उत्तर भी हिन्दी में देना अनिवार्य है।
8. कोई कर्मचारी फाइल में टिप्पणी हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है। जिन कार्यालयों मे 80 प्रतिशत कर्मचारी हिन्दी मे प्रवीणता प्राप्त कर चुके हैं, वहाँ हिन्दी में नोटिंग या ड्राफ्टिंग करने का आदेश दिया जा सकता है।
9. जिस कर्मचारी ने मैट्रिक आदि परीक्षा में हिन्दी ली थी अथवा वह यह घोषणा करे कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, तो उसको हिन्दी में प्रवीण माना जाएगा।

10. जिस कर्मचारी ने प्राज्ञ या प्राज्ञ के समकक्ष परीक्षा पास की हो उसे हिन्दी में कार्य साधक समझा जाए। ऐसे कर्मचारी 80 प्रतिशत हों तो उस कार्यालय का नाम राजपत्र में अधिसूचित किया जाएगा।
11. केन्द्रीय सरकार के सभी मैन्यूल, संहिताएँ, नियम, रजिस्टर, फार्म, नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्र शीर्ष, लिफाफे और स्टेशनरी की मद्दें हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं मे होंगी।
12. सरकारी नियमों और आदेशों का अनुपालन कराने और भाषा प्रयोग की जांच पड़ताल करते रहने का उत्तरदायित्व प्रत्येक कार्यालय के प्रधान का होगा।

1976 के बाद राजभाषा विभाग का कार्य - 1976 के राजभाषा नियम के जारी होने पर हिन्दी के प्रयोग को आगे बढ़ाने का कार्य किया जाता रहा है। विभाग प्रतिवर्ष हिन्दी राजभाषा के उत्तरोत्तर विकास के लिए कार्यक्रम निर्धारित करता है। हिन्दी में सर्वाधिक प्रयोग करने वाले कर्मचारियो को पुरस्कृत किया जाता है। विभाग के निदेशक और निरीक्षक देश भर के कार्यालयों में जाकर वहाँ हिन्दी के प्रयोग की गतिविधि आँक कर सलाह देते हैं और उनकी कठिनाईयों को दूर करने का प्रयत्न करते हैं। विभाग के हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत तीन पाठ्यक्रम बनाए गए हैं। 1. प्रबोध 2. प्रवीण और 3. प्राज्ञ। इन परीक्षाओं में अच्छे अंक पाने वाले को पुरस्कृत किया जाता है। उनकी वेतनवृद्धि भी की जाती है।

हिन्दी भाषा का मानकीकरण :

भाषा के मानकीकरण से अभिप्राय भाषा का वह रूप जो उच्चारण, रूप–रचना, वाक्य रचना, शब्द और रचना, अर्थ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, प्रयोग तथा लेखन आदि की दृष्टि से उस भाषा के सभी नहीं तो अधिकांश सुशिक्षित लोगों द्वारा शुद्ध माना जाता है, अर्थात् मानकीकरण की प्रक्रिया अनेकता में एकता की खोज है। अंग्रेजी विद्वान् एघरिंगटन की पुस्तक 'हिन्दी ग्रामर' जिसका हिन्दी अनुवाद 'भाषा–भास्कर' नाम से 1871 में प्रकाशित हुआ था में सर्वप्रथम हिन्दी भाषा के मानकीकरण का प्रश्न उठाया गया था। इसी क्रम में डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया उन्नीसवीं सदी के प्रारंभिक लेखकों के कथनों के आधार पर कुछ बिन्दु स्पष्ट करते हैं जैसे –

1. ब्रजभाषा और रेखता दोनों से भिन्न 'खड़ी बोली' भाषा थी।
2. यह गँवारू भाषा न होकर साहित्यिक एवं परिनिष्ठित भाषा थी, जिसमें साहित्यिक ग्रंथों की रचना संभव थी।
3. इसमें 'यामिनी' शब्दों का प्रयोग वर्जित था।
4. इसका मूल आधार दिल्ली और आगरा की बोली थी।
5. इस भाषा का विस्तार दूर–दूर तक था।

हिन्दी भाषा के मानकीकरण का एक कारण उसका केन्द्रीय भाषा होना है। क्योंकि किसी भी भाषा को मानक बनाने के लिए राजनीतिक केन्द्र के साथ साथ सांस्कृतिक केन्द्र का भी होना विशेष महत्व का होता है।

हिन्दी की भाषिक व्यवस्था :

प्रत्येक भाषा की एक भाषिक व्यवस्था होती है, जो उसके मौखिक एवं लिखित रूप को उजागर करती है।

हम केवल लिखित भाषा के स्वरूप की चर्चा करके किसी भी भाषा की व्यवस्था को समग्र रूप से ग्रहण नहीं कर सकते, क्योंकि मौखिक भाषा का स्वरूप भी अपने आप में विशिष्ट होता है, तथा कई घटकों को अपने भीतर समाहित किए हुए होता है। परन्तु जब किसी भाषा के मानक रूप की चर्चा की जाती है तब उसका लिखित स्वरूप ही महत्वपूर्ण होता है।

इस दृष्टि से जब हिन्दी की भाषिक व्यवस्था तथा उसके मानक रूपों का उल्लेख किया जाता है तो उसके अन्तर्गत लिपि, वर्तनी, शब्द, वाक्य, अभिव्यक्तियों सभी के मानकीकरण की चर्चा की जाती है, जो भाषा को स्थिरता तथा एकरूपता प्रदान करने में सहायक सिद्ध होता है। हम यहां सर्वप्रथम हिन्दी भाषा के मौखिक एवं लिखित स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे–

मौखिक भाषा का स्वरूप

यह सर्वविदित है कि भाषा ध्वनि–प्रतीकों की वह व्यवस्था होती है, जिसके माध्यम से मनुष्य विचारों का आदान–प्रदान करता है। इससे तीन बातें स्पष्ट होती हैं–

1. भाषा एक व्यवस्था है।
2. भाषा में ध्वनि–प्रतीक होते हैं।
3. भाषा का उद्देश्य विचारों का आदान–प्रदान होता है।

विचारों का यह आदान–प्रदान दो प्रकार से होता है–

(अ) बोलकर या बातचीत के माध्यम से।

(आ) लिखकर या लेखन के माध्यम से।

इस प्रकार प्रत्येक भाषा के स्वर और व्यंजनों की संख्या सीमित होती है, लेकिन हमें इन सीमित ध्वनियों का विभिन्न अनुक्रमों में प्रयोग करके उस भाषा के असीम शब्द प्राप्त होते हैं। इन ध्वनियों के उच्चारण सम्बन्धी हमारे मुख–विवर से होता है। समस्त उच्चारण प्रक्रिया कुछ इस प्रकार सम्पादित होती है।

1. हम नाक से साँस लेते हैं, यह साँस फेफड़ों तक पहुंचती है, फिर फेफड़ों से चलकर मुख–विवर तक आती है।
2. मुख में दो उच्चारण अवयव–जीभ तक निचला ओंठ होते हैं जो ऊपर उठाकर ऊपरी जबड़े में विभिन्न स्थानों पर फेफड़े से आने वाली इस वायु के मार्ग में अवरोध पैदा करते हैं।
3. इसी अवरोध के फलस्वरूप विभिन्न व्यंजन ध्वनियाँ उत्पन्न की जाती हैं।
4. स्वरों के उच्चारण में वायु बिना किसी अवरोध के बाहर निकल जाती है।

उदाहरण के लिए हिन्दी में 'प' ध्वनि के उच्चारण में निचला ओंठ ऊपर उठकर ऊपरी ओंठ का स्पर्श करती है, जिसमें फेफड़ों में आने वाली वायु का मार्ग में अवरोध पैदा हो जाता है फिर निचला ओंठ अपने स्थान पर आ जाता है। वायु मुख 'प' ध्वनि के उच्चारण के साथ बाहर निकलता है।

इस प्रकार व्यक्ति निरन्तर बोलता रहता है और इसी नैरन्तर्य के कारण मनुष्य के उच्चारण अवयव अपनी

भाषा की ध्वनियों का उच्चारण करने में अभ्यस्त हो जाते हैं, जो ध्वनियाँ हमारी भाषा में नहीं होतीं हमें उनके बोलने का अभ्यास नहीं हो पाता। जब हमें इन ध्वनियों को बोलना पड़ता है तो हम सही उच्चारण नहीं कर पाते। उदाहरण के लिये हिन्दी की ट, ठ, ड, ढ ध्वनियों का सही उच्चारण यूरोप के लोग नहीं कर पाते, क्योंकि उनकी भाषा में ये ध्वनियाँ नहीं हैं और उनके उच्चारण अवयवों को इन ध्वनियों के उच्चारण का अभ्यास आरंभ से हुआ ही नहीं है।

भाषा के मौखिक रूप को प्रत्येक भाषा–भाषी अपने परिवेश से स्वतः सीख लेता है। बच्चे भाषा वैसे सीखते हैं? सर्वप्रथम वे कुछ ध्वनियाँ बोलना आरम्भ करते हैं, फिर इन ध्वनियों से बने कुछ टूटे–फूटे शब्द बोलना आरंभ करते हैं, फिर इन ध्वनियों से बने कुछ टूटे–फूटे शब्द बोलना आरंभ करते हैं, उसके बाद कुछ शब्दों को मिलाकर शुरू करते हैं और अंत में वाक्यों को बोलना आरंभ करते हैं। कुछ ही वर्षों में वे अपनी भाषा का व्यवहार अच्छी तरह से करने लगते हैं। वास्तव में बच्चों में यह जन्मजात गुण होता है कि वह अपने परिवेश से व्यवहार की जाने वाली भाषा को सुन–समझकर स्वतः ही सीख लेते हैं और तीन–चार साल की अवस्था तक पहुंचते–पहुंचते अपनी भाषा का प्रयोग करने लगते हैं। जिस भाषा के वाक्यों और शब्दों का हम प्रयोग करते हैं। उसका स्वरूप क्या है? उनकी रचना कैसे हुई? शब्दों तथा उसमें प्रयुक्त ध्वनियों का उच्चारण कैसे होता है? वस्तुतः वाक्य की संरचना विभिन्न शब्दों/पदों से होती है। शब्द, विभिन्न ध्वनियों के संयोग से बनते हैं और प्रत्येक भाषा में ये ध्वनियाँ दो प्रकार की होती हैं–

(क) स्वर ध्वनियाँ

(ख) व्यज्जन ध्वनियाँ

जब ये स्वर एवं व्यंजन ध्वनियाँ विभिन्न अनुक्रमों में एक साथ मिलकर उच्चरित की जाती हैं, तब शब्दों का उच्चारण होता है। समान ध्वनियाँ विभिन्न अनुक्रमों में अलग–अलग शब्दों का निर्माण करती है। जैसे –

क् + अ + ल् + अ + म् + अ = कमल

क् + अ + म् + अ + ल् + अ = कमल

क् + अ + ब् + ई + र् + अ = कबीर

क् + अ + र + ई + ब् + अ = करीब

यह स्पष्ट है कि जहां तक भाषा के मौखिक रूप के उच्चारण का संबंध है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि मनुष्य के उच्चारण अवयव आरंभ से किस प्रकार की ध्वनियों के उच्चारण के लिये अभ्यस्त हुए हैं।

भाषा का उच्चरित किया जाना मौखिक भाषा का एक पहलू है, लेकिन इससे भाषा का उद्देश्य पूरा नहीं होता। भाषा का उद्देश्य विचारों के आदान–प्रदान से पूरा होता है। उदाहरण के लिए –

- वक्ता द्वारा उच्चरित वाक्य श्रोता तक पहुंचने चाहिए।
- श्रोता द्वारा इनको कानों के माध्यम से ग्रहण किया जाना चाहिए।
- श्रोता इस योग्य होना चाहिए कि वह इन वाक्यों को सुनकर समझ सके तथा वक्ता की भूमिका का निर्वाह करते हुए वार्तालाप को आगे बढ़ा सके।

इस दृष्टि से मौखिक भाषा का क्षेत्र काफी व्यापक है। इससे भाषा के तीन पहलू सामने आते हैं, जो मौखिक भाषा के स्वरूप को स्पष्ट करते हैं –

(क) वक्ता के मुख विवर में घटित होने वाली उच्चारण प्रक्रिया से संदेश का निकलना।

(ख) श्रोता द्वारा कानों के माध्यम से इस संदेश का ग्रहण किया जाना।

(ग) वह माध्यम जिसमें ध्वनियों तरंगों के रूप में श्रोता तक पहुंचती है अर्थात् कुछ इस प्रकार कहा जा सकता है कि –

1. मौखिक भाषा की प्रकृति ध्वन्यातमक होती है।
2. ये ध्वनियाँ विभिन्न अनुक्रमों में उच्चरित की जाती हैं।
3. ये ध्वनि तरंगों के रूप में चलकर श्रोता तक पहुंचती है।
4. श्रोता कानों के माध्यम से इन्हें ग्रहण करता है।

वह समझकर उसी तथ्य तक पहुंचता है, जिस तथ्य को वक्ता संप्रेषित करना चाहता है।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि मौखिक भाषा वक्ता और श्रोता के बीच परस्पर विचारों के आदान–प्रदान की संभावनाएं लेकर चलती हैं। मौखिक वार्तालापों में कभी–कभी यह भी संभव है कि श्रोता वक्ता के सामने प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित न हो, परन्तु मौखिक भाषा का प्रयोक्ता अपने मन में सदैव श्रोता के अस्तित्व को समाहित करके चले। उदाहरण के लिए दूरदर्शन या रेडियो पर प्रसारित अनेक ऐसे कार्यक्रम होते हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार के श्रोताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। इस प्रकार के प्रसारणों में वक्ता के मन में 'श्रोता' अवश्य रहता है।

मौखिक भाषा की प्रकृति ऐसी होती है कि एक बार उच्चरित होकर यह समाप्त हो जाती है। इसका उपयोग तो उसी समय संभव नहीं है, जिस समय इसका उच्चारण किया जा रहा हो। इसीलिए कहा जाता है कि मौखिक भाषा–

(अ) काल सापेक्ष होती है।

(ब) गतिशील होती है।

(स) अस्थायी या नश्वर होती है।

मौखिक भाषा का संबंध मुख्यतः उच्चारण से होता है। अतः उसमें उच्चारण से जुड़े हुए अनेक गुण स्वतः ही आ जाते हैं। उच्चारण संबंधी ये गुण निम्नलिखित हैं–

संहिता, बालाघात, तान तथा अनुतान, आदि तरह तरह की चेष्टाएं, हाव–भाव प्रदर्शन तथा धीरे–धीरे या तेजी से बोलना आदि।

मौखिक भाषा की संरचनाएं प्रायः सरल होती है। शब्दों, पदबन्धों, वाक्यों आदि की पुनरावृत्ति प्रायः वहां दिखाई पड़ती है। मातृभाषा–भाषी बच्चा जन्म लेने के कुछ ही वर्षों में अपने परिवेश से मौखिक भाषा को सीख लेता है। लिखित भाषा से तो उसका परिचय औपचारिक शिक्षा के बारे में ही होता है।

लिखित भाषा का स्वरूप :

भाषा के विकास का इतिहास मनुष्य के विकास के इतिहास के साथ जुड़ा हुआ है। भाषा के लिखित रूप का विकास तो बहुत बाद में हुआ। जब मनुष्य को यह अनुभव होने लगा होगा कि वह अपने विचारों, अपनी बातों को स्थायित्व प्रदान करे और उन लोगों तक भी अपने मन की बात पहुंचा सके, जो उसके सामने नहीं है तब मौखिक भाषा को लिपिबद्ध करने की आवश्यकता महसूस हुई। स्पष्ट है कि भाषा का लिखित रूप उसके मौखिक रूप की तुलना में काफी नया है।

मौखिक भाषा का संबंध भाषित ध्वनियों के उच्चारण से है जबकि लिखित भाषा का संबंध भाषित ध्वनियों को लिपिबद्ध करने से है। भाषा में विभिन्न ध्वनियों के लिपि चिन्हों की व्यवस्था की जाती है। ये लिपि चिन्ह वर्ण कहलाते हैं। वर्ण या लिपि चिन्ह वे लेखनीय आकृतियां हैं, जो अलग–अलग भाषाओं में ध्वनि प्रतीक के रूप में स्वीकृत हैं। अघोष, अल्पप्राण, ओष्ठ्य ध्वनियों के लिए देवनागरी लिपि में 'प' वर्ण बनाया गया है तो रोमन में 'ए'। इस प्रकार संसार में अनेक लिपियों का उदय हुआ और विभिन्न भाषाओं ने इन्हीं लिपियों में से किसी एक को अपनी लिखित अभिव्यक्ति के लिए चुन लिया। उदाहरण के लिए –

(क) संस्कृत, हिन्दी, मराठी, नेपाली आदि के लिए देवनागरी लिपि।

(ख) अंग्रेजी, जर्मन, फ्रैंच, स्पेनिश, पॉलिश, इटेलियन आदि के लिये रोमन लिपि।

(ग) उर्दू, अरबी, फारसी, कश्मीरी आदि के लिए फारसी लिपि।

इस प्रकार हर भाषा की अपनी एक लिखित व्यवस्था है जिसमें विभिन्न ध्वनियों को विभिन्न वर्णों/लिपि चिन्हों द्वारा व्यक्त किया जाता है। प्रत्येक भाषा में अपनी–अपनी लिपि व्यवस्था की विशेषताओं के अनुरूप विभिन्न वर्णों के संयोग से शब्दों का लेखन किया जाता है। उदाहरणस्वरूप –

– रोमन लिपि में व्यंजन तथा स्वरों को अलग–अलग करके लिखा जाता है, जबकि बोलते समय मिलाकर शब्द उच्चरित किए जाते हैं, जैसे – so, book, bag आदि।

– देवनागरी लिपि में व्यंजन और स्वर मिलाकर ही लिखे जाते हैं। जैसे–कोयल, पैसा, किनारी आदि। रोमन की तरह–क्+ओ+य्+अ+ल्+अ तथा प्+ऐ+स्+आ तथा क्+इ+न्+आ+र्+ई नहीं

लेखन प्रक्रिया का संबंध हाथ की मांसपेशियों तथा उंगलियों को इस प्रकार अभ्यस्त कराए जाने से है कि व्यक्ति लेखनी को सही ढंग से पकड़कर लेखन कार्य कर सके। अतः मौखिक भाषा को बच्चा जहां अपने परिवेश से स्वतः ही सीख लेता है, वहां लिखित भाषा को सीखने के लिए प्रयास करना पड़ता है लिखने–पढ़ने की यह शिक्षा बच्चे को औपचारिक ढंग से विद्यालय में दी जाती है। लिखित भाषा की कुछ विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

1. लिखित भाषा अपनी प्रकृति में स्थिर, स्थायी तथा देश–सापेक्ष होती है।
2. लिखित भाषा के रूप में जो कुछ लिपिबद्ध कर दिया जाता है उसे अनंतकाल तक सुरक्षित रखा जा सकता है।
3. लिखित भाषा जिस स्थान पर लिखी जाती है, वहीं से उसका संबंध होता है।

4. लिखित भाषा का कोई भी पाठक हो सकता है।
5. विभिन्न भाषाओं में धर्म, दर्शन संस्कृति और साहित्य से संबंधित लिखित सामग्री का उपयोग आने वाली पीढ़ियों के पाठकों द्वारा किया जाता है।
6. लिखित भाषा में मौखिक भाषा जैसी परस्पर आदान–प्रदान की स्थिति (केवल पत्राचार और कंप्यूटर को छोड़कर) नहीं होती।

मौखिक एवं लिखित भाषा में अन्तस्सम्बन्ध :

भाषा के मौखिक एवं लिखित रूप वस्तुतः एक ही भाषा की अभिव्यक्ति के दो माध्यम हैं। ये दोनों रूप एक–दूसरे से संबंध है तथा एक–दूसरे को प्रभावित भी करते हैं। हमें अलग–अलग संदर्भों में अपने मन की बात को दूसरे तक पहुंचाने के लिए दोनों ही माध्यमों की आवश्यकता पड़ती है।

बच्चा अपनी भाषा अपने परिवेश से सीखता है तथा दूसरों की बात समझता है, परन्तु सही अर्थों में उसका भाषाई परिष्कार तब होता है, जब उसे लिखना–पढ़ना आ जाता है। लिखित भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के बाद बच्चे के भाषाई कोश में शब्दों और संरचनाओं के भंडार का विकास होता है। इससे उसके शब्द भण्डार में वृद्धि होती है और साथ ही साथ अन्य भाषा के शब्द भी उसके शब्द भण्डार में आ जाते हैं। कोश भाषा के लिखित रूप या लिखित भाषा का प्रतिनिधित्व करते हैं। जब भी कोई अपरिचित शब्द हमारे सामने आता है तो हम तुरन्त कोश का सहारा लेते हैं, क्योंकि हमें कोश से निम्नलिखित बातों की जानकारी होती है–

1. अपरिचित शब्द के अर्थ का ज्ञान।
2. भाषा के व्याकरणिक रूप का ज्ञान।
3. शब्द के समानार्थी शब्दों का ज्ञान।
4. विभिन्न संदर्भों में उस शब्द के प्रयोग का ज्ञान।
5. अन्य शब्द रूपों के साथ–साथ उसके प्रयोग की विभिन्न दिशाओं का ज्ञान।

हम कह सकते हैं कि कोश हमारी भाषाई क्षमता को अधिक सुदृढ़ करते हैं। हम कोश से प्राप्त ज्ञान से मौखिक भाषा की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बना सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि हम आज पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत जैसी भाषाओं को सीखना चाहें, तो निश्चित रूप से इन भाषाओं को लिखित सामग्री को ही आधार बनाना पड़ेगा।

मौखिक भाषा और लिखित भाषा में अन्तर :

जहां मौखिक भाषा और लिखित भाषा में परस्पर सम्बद्धता है वहां अन्तर भी है। भाषा के किसी भी रूप को दूसरे से छोटा या बड़ा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि भाषा के दोनों का विकास अपनी–अपनी संप्रेषणात्मक आवश्यकताओं के अनुरूप हुआ है। दोनों के प्रयोग के अपने–अपने संदर्भ हैं। उदाहरणस्वरूप–

1. लिखित भाषा जहां स्थायी एवं स्थिर होती है, वहां मौखिक भाषा स्थिर एवं गतिशील होती है।
2. लिखित भाषा प्रायः सर्जनात्मक एवं शिष्ट साहित्य का माध्यम होती है, जबकि मौखिक भाषा लोक साहित्य का माध्यम होती है।

3. लिखित साहित्य में व्याकरणिक नियमों का सख्ती से पालन किया जातर है, जबकि मौखिक भाषा में शिथिल संरचनाएं अधिक होने से व्याकरण का उतना नियंत्रण नहीं होता।

हम कह सकते हैं कि भाषा के मौखिक एवं लिखित दोनों रूप ही भाषिक अभिव्यक्ति के माध्यम हैं, दोनों ही अपने अपने संदर्भों में उपयोगी हैं। अतः दोनों में से कोई भी किसी का स्थानापन्न नहीं बन सकता। हम इनके परस्पर अन्तर को निम्नलिखित स्तरों पर समझ सकते हैं–

रूपस्वनागत अन्तर :

भाषा के मौखिक एवं लिखित रूपों में प्रमुख अन्तर रूप–रचना के स्तर का है मौखिक भाषा का संबंध उच्चारण प्रक्रिया से है और उच्चारण की विभिन्न इकाइयाँ हमारे सम्मुख ध्वनियों के रूप में आती हैं। लिखित भाषा में इन्हीं ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए लिपि चिन्हों की व्यवस्था की जाती है। यह अन्तर निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत होता है–

मौखिक भाषा -

1. मौखिक भाषा में विभिन्न ध्वनियों के सही उच्चारण सिखान पर बल दिया जाता है।
2. उच्चारण अवयवों को सही उच्चारण स्थान पर ले जाकर सही ध्वनि के उच्चारण पर बल दिया जाता है।
3. प्रायः बच्चे किसी विशेष प्रयास के बिना केवल सुनकर ही उच्चारण सीख जाते हैं।
4. मौखिक भाषा के स्वरूप के स्तर पर विभिन्न ध्वन्यात्मक इकाइयाँ तथा ध्वनि गुण आते हैं।

लिखित भाषा -

1. लिखित शब्दों में लिपि चिन्हों या वर्णों का लिखना सिखाने का बल दिया जाता है।
2. लेखनी को पकड़कर हाथों की उंगलियाँ और मांसपेशियाँ का विशिष्ट अभ्यास करवाया जाता है।
3. लिपि चिन्हों और इनसे उद्‌भूत वर्तनी व्यवस्था को प्रयास से सीखा जा सकता है।
4. लिखित भाषा में तरह–तरह के दृश्य संकेत, चित्र, ग्राफ तथा तरह–तरह की लेखकीय आकृतियाँ होती हैं।

संरचना तथा प्रयोग के स्तर पर अन्तर :

मौखिक तथा लिखित भाषा में संरचना तथा प्रयोग के स्तर भी भिन्नताएं देखी जा सकती है।

लिखित भाषा - लिखित भाषा की संरचना अधिक व्यवस्थित होती है, साथ की सुगठित तथा जटिल होती है.।

लिखित भाषा का प्रयोग करते समय लेखक के पास इतना अवकाश होता है कि वह अपने विचारों को तर्कपूर्ण ढंग से व्यवस्थित क्रम में व्यक्त कर सकता है, जटिल संरचना वाले लम्बे–लम्बे वाक्यों का प्रयोग कर सकता है, वाक्यों के बीच एक निश्चित क्रमबद्धता ला सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर एक बार लिखी हुई संरचनाओं को पुनः परिवर्तित कर सकता है।

मौखिक भाषा - हमें मौखिक भाषा में प्रायः शिथिल संरचना वाले वाक्य देखने को मिलते हैं। यह वाक्य बड़ी सहजता और स्वाभिकता से उत्पन्न होते हैं। वक्ता चाहकर भी लिखित भाषा जैसी कसावट तथा संरचनात्मक

जटिलता नहीं ला सकता और मौखिक भाषा में वाक्यों के बीच क्रमबद्धता का अभाव दिखाई देता है।

प्रयोग के स्तर पर मौखिक तथा लिखित भाषा के अन्तर को समझने के लिए किसी व्यक्ति के भाषण को टेपांकित कीजिए। इस टेपांकित भाषा को लिखित रूप में व्यक्त करने की कोशिश कीजिए। स्पष्ट है कि मौखिक भाषण के लिप्यांकन करने में कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। क्योंकि मौखिक भाषण में व्याकरण के नियमों का प्रायः उल्लंघन मिलता है। जैसे कभी क्रिया पहले आ जाती है तो कभी कभी विशेष्य पहले आ जाता है तो विशेषण बाद में। विभिन्न पदबन्ध एवं वाक्य प्रायः आगे–पीछे करके बोले जाते हैं। विभिन्न पदबन्धों और उपवाक्यों की पुनरावृत्ति की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है।

स्थायित्व के स्तर पर :

मौखिक भाषा अस्थायी या नश्वर होती है। इसका महत्व उसी समय तक होता है जिस समय वह उच्चरित की जाती है। इसके विपरीत लिखित भाषा स्थिर और स्थायी होती है। इसके लिखित रूप को दीर्घकाल तथा सहेज कर रखा जा सकता है।

शब्दावली के स्तर पर :

लिखित और मौखिक भाषा में कुछ विशिष्ट प्रकार की शब्दावली का प्रयोग मिलता है। कुछ शब्द जो मौखिक भाषा में मिलते हैं वह लिखित भाषा में नहीं मिलते और जो लिखित भाषा में प्रयुक्त होते हैं वे मौखिक भाषा में प्रयुक्त नहीं होते। जैसे हिन्दी में इंजीनियर के लिए अभियंता, डॉक्टर के लिए चिकित्सक, जज के लिए न्यायाधीश, आदि शब्द उपलब्ध हैं, लेकिन मौखिक भाषा में इनका प्रयोग कम ही दिखाई पड़ता है।

रूढ़ अभिव्यक्तियों के प्रयोग के स्तर पर :

रूढ़ अभिव्यक्तियों का प्रयोग मौखिक भाषा की तुलना में लिखित भाषा में अधिक मिलता है। उदाहरण के लिए शादी ब्याह, तीज–त्योहार, उत्सव–समारोह के अवसर पर भेजे जाने वाले निमंत्रण/बधाई पत्रों की भाषा रूढ़ हो जाती है। जैसे आयुष्मान, आयुष्मती, श्रीमती, नवदम्पती।

मानक और अमानक प्रयोग के स्तर पर :

हर भाषा के प्रयोग के स्तर पर तरह तरह की भिन्नताएं पाई जाती हैं, उदाहरण के लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश के लोग बोलते–'मुझे जाना है' दिल्ली के लोग बोलते हैं –'मैंने जाना है।' ऐसी स्थिति में मानक/अमानक के आधार पर इसकी शुद्धता एवं अशुद्धता तय करते हैं।

विशिष्ट अभिलक्षण :

मौखिक और लिखित भाषा में कुछ विशिष्ट अभिलक्षण पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए लिखित भाषा में निम्नलिखित युक्तियाँ पाई जाती हैं, जो मौखिक भाषा में नहीं पाई जातीं। जैसे–

(अ) विराम चिन्हों का प्रयोग

(ब) तरह तरह की लेखकीय आकृतियों का प्रयोग

(स) चित्रों तथा आरेखों का प्रयोग

(द) रंगों का प्रयोग।

इन युक्तियों के प्रयोग से लिखित भाषा का फलक बहुत व्यापक हो जाता है। इसी प्रकार मौखिक भाषा में भी कुछ उच्चारणात्मक युक्तियों का प्रयोग किया जाता है। जैसे–

(अ) सुरों का उतार चढ़ाव

(ब) लय

(स) तान तथा अनुतान

(द) बलाघात।

यदि एक भाषा रूप को दूसरे में परिवर्तित करना हो अर्थात् लिखित को मौखिक और मौखिक की लिखित में, तो इनमें से कुछ युक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं जैसे–

1. चित्रों, ग्राफों, नक्शों तथा अनेक आरेखों को मौखिक भाषा में अभिव्यक्त करना संभव नहीं है।
2. समय सारणियों, रेखा–गणितीय आकृतियों, मानचित्रों पर प्रदर्शित नदियों, नाले, पहाड़, मैदान, देश की सीमाओं को मौखिक भाषा में नहीं समझाया जा सकता।

इसी तरह से मौखिक भाषा के कुछ ऐसे अभिलक्षण होते हैं, जिन्हें लेखन में अभिव्यक्त करना कठिन होता है। जैसे–

– तरह–तरह के हाव–भावों का प्रदर्शन,

– तरह–तरह की मुद्राएँ और आकृतियां बनाना,

– तरह–तरह की चेष्टाओं का प्रदर्शन,

– तरह–तरह की शारीरिक–मानसिक अनुक्रियाएं,

– सुरों का उतार–चढ़ाव आदि।

मौखिक भाषा का लिप्यंकन :

मौखिक भाषा अनेक प्रकार की उच्चारणात्मक विशिष्टताओं के साथ प्रयुक्त होती है। व्यक्ति बोलते समय तरह–तरह की चेष्टाएं, भाव–भंगिमाओं को भी अभिव्यक्त करता है। वह कभी धीरे बोलता है, कभी जोर से, कभी हंसकर, तो कभी नाराज होकर, कभी मुस्कुराता है तो कभी व्यंग्य करता है, कभी चीखता है, तो कभी चिल्लाता है। इन सभी चेष्टाओं के हाथ–पैर हिलाना, इशारे करना, तरह–तरह के संकेत प्रदर्शित करना आदि अनेक शारीरिक मानसिक अनुक्रियाएं भी बोलने के साथ–साथ सामने आती हैं। मौखिक भाषा से जुड़ी इन तमाम विशेषताओं, शारीरिक मानसिक चेष्टाओं को लिखित भाषा में हू–ब–हू व्यक्त करना कठिन कार्य है। हम लिखते समय यह तो कह सकते हैं कि 'उसने रोते हुए कहा', या 'जोर से बोलकर कहा' या 'धीरे से कहा' या 'मुस्कुरा कर बोली'। ये सब बातें लिखित भाषा में व्यक्त करने में वर्णन प्रधान युक्तियों का सहारा लेना पड़ता है। हमारे साहित्यकार अपनी कहानियों, नाटकों, एकांकियों आदि में यह प्रयत्न करते हैं कि पात्रों का वार्तालापों में जहां तक हो सके, मौखिक भाषा को जीवन्तता को बनाए रखें।

लेखन में उच्चरणात्मक प्रभाव :

प्रत्येक भाषा में लेखक उस भाषा की लिपि–व्यवस्था की प्रकृति के अनुरूप ही उच्चारणात्मक प्रभावों को व्यक्त करने के लिए तरह–तरह की लेखकीय युक्तियों को अपनाता है। इन लेखकीय युक्तियों के माध्यम से लेखन में काफी हद तक मौखिक भाषा में उच्चारणात्मक प्रभावों को बनाए रखने की कोशिश की जाती है, परन्तु मौखिक भाषा की सभी ध्वन्यात्मक विशेषताओं को लिपिबद्ध करना असंभव कार्य है। हिन्दी में विभिन्न लेखकों द्वारा प्रयुक्त कुछ प्रमुख लेखकीय युक्तियां निम्नलिखित हैं–

वर्णन-प्रधान पदबन्धों का प्रयोग :

प्रायः साहित्यकार भाषा के उच्चारण सम्बन्धी प्रभावों को लेखन में व्यक्त करने के लिए वर्णन–प्रधान पदबन्धों का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए रोने की दशा का वर्णन करना हो तो – 'वह सिसक–सिसक कर अपनी बात कह रही थी', या 'वह फूट–फूटकर रो रही थी।'

इन वाक्यों में 'सिसक–सिसक कर' या 'फूट–फूटकर' वर्णनात्मक पदबन्ध है। रो–रोकर, सिसक–सिसक कर कहंता में करुण–कहानी–प्रसाद। इसी प्रकार ऐसे कुछ अन्य उदाहरण हैं–

1. मैंने कातर भाव से कहा, ''मुझे अभी कोई गुरु तो नहीं मिला माता जी।''

–(अनामदास का पोथा, हजारी प्रसाद द्विवेदी)

2. 'वे ठंडी साँस भर कर कहती' ''एक बच्चा और हो जाता है।''

–(छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान)

विराम-चिन्हों का प्रयोग :

लेखक अनेक उच्चारण सम्बन्धी प्रभावों को विराम चिन्हों के माध्यम से अभिव्यक्त करत है। ये विराम चिन्ह प्रायः उच्चारण में आने वाले अल्पविराम, पूर्ण विराम, प्रश्न आश्चर्य आदि को प्रकट करते हैं तथा नये–नये ध्‍वन्यात्मक प्रभावों को भी अभिव्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए –

''अपने बच्चों को भी शायद वह इतना प्यार नहीं दे सकता।.......और
अपना बच्चा है!..........अपना पराया? अब तो सब अपने सब पराये।

– (ठुमरी, फणश्विरनाथ रेणु)

अन्तराल छोड़कर लिखना :

लिखित भाषाई रूपों में उच्चारण की स्वाभाविकता को बनाए रखने के लिए अधिकांश लेखक वाक्यों के बीच, शब्दों के बीच तथा एक ही शब्द में वर्णों के बीच अन्तराल (स्पेस) छोड़कर लिखिते हैं। विशेषकर कथा साहित्य में ऐसे प्रयोग बराबर मिलते रहते हैं। जैसे–

''बस......पी लूं एक पैग और.............और भुला दूं सब भूत की (कांपकर)
लेकिन........लेकिन क्या? लेकिन मेरी प्रतिज्ञा..... मेरी आन.....।

– (नहीं, नहीं, नहीं : विष्णु प्रभाकर)

शब्दों तथा वर्णों की पुनरावृत्ति :

शब्दों या वर्ण चिन्हों की पुनरावृत्ति करके भी लेखक लिखित भाषा में उच्चारणात्मक प्रभावों को बनाए रखने का प्रयत्न करते हैं। यदि किसी बात को जोर से कहना है, तब लेखक प्रायः शब्दों तथा वर्णों को पुनरावृत्ति करके इन प्रभावों को लेखन में व्यक्त करने की कोशिश करते हैं, जैसे–

> 'लेकिन मेरी प्रतिज्ञा..... मेरी..... आन..... आन.... आन..... जीना दूभर
> कर दिया, इस आन ने! नहीं, नहीं, नहीं आन..... ओ हो आन.... है
> तो रहे।'

(नहीं, नहीं, नहीं : विष्णु प्रभाकर)

मोटे-गाढ़े अक्षरों से लिखना :

मौखिक भाषा में जहां किसी महत्वपूर्ण बात को बल देकर कहा जाता है उसे लेखक में प्रायः मोटे गाढ़े अक्षरों में लिख दिया जाता है। कई बार उस महत्वपूर्ण अंश को रेखांकित भी कर दिया जाता है। विशेष रूप से जब शीर्षक देने हों, परिभाषाएं देनी हों या किसी स्थान या व्यक्ति का नाम से बताना हों।

उच्चारण के अनुरूप वर्तनी :

किसी वक्ता विशिष्ट की उच्चारणगत विशेषताओं के प्रभाव को दिखने के लिए लेखक शब्दों की वर्तनी वैसे ही रखता है जैसा कि उच्चारण किया जाता है। उदाहरण के लिए कोई जानबूझकर बच्चों जैसी तोतली भाषा में बोलता है तो उच्चारण की सहजता और स्वाभाविकता को दिखाने के लिए उसी तरह के शब्दों को लिखता है, जैसे–

> ''सुनाओ मुन्ने सुनाओ, पूरे इमान से सुनाओ। तहो अंतल जी से,
> अंतल अमें ये लोग मालते ऐं।''

(मौजूदा हालात को देखकर : मृणाल पांडे)

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि जहां मौखिक भाषा में प्रायः सरल एवं शिथिल संरचनाएं अधिक होती हैं, वहीं लिखित भाषा में जटिल एवं व्यवस्थित वाक्यों का प्रयोग अधिकतम होता है। मौखिक भाषा और लिखित भाषा रूपों में अन्तर होता है। इसलिये एक रूप की विशेषताओं को दूसरे रूप में अभिव्यक्त करने की आवश्यकता पड़ती है।

सारांश :

राज्य का कार्य चलाने के लिए किसी–न–किसी भाषा का होना आवश्यक है। पालि, प्राकृत अथवा अपभ्रंश भाषा को भी कभी राजभाषा माना जाता था। हिन्दी सभी आर्यभाषाओं की सहोदरी है, यह संस्कृत की उत्तराधिकारिणी है, और सभी भारतीय भाषाओ से सरल है अतः राजभाषा के रूप में हिन्दी को एकमत से स्वीकार किया गया। 14 सितंबर 1949 को भारत के संविधान में भी हिन्दी को मान्यता प्रदान की गई। तब से राजकार्यों में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग का आरंभ होता है। भाषा के मानकीकरण का अर्थ भाषा का वह रूप

है जो उच्चारण, रूप–रचना, वाक्य रचना, शब्द रचना, अर्थ, मुहावरे इत्यादि के रूप से अधिकतर शुद्ध माना जाता है।

लघु प्रश्न :

1. हिन्दी की संवैधानिक स्थिति से आप क्या समझते हैं। टिप्पणी करें।
2. हिन्दी भाषा का मानकीकरण विषय पर अपना संक्षिप्त वक्तव्य दें।

पाठ संख्या-2.4 **लेखिका-डॉ० सुरिन्द्रपाल कौर**

देवनागरी लिपि

इकाई की रूपरेखा :

2.4.1 उद्देश्य
2.4.2 प्रस्तावना
2.4.3 देवनागरी लिपि : उत्पत्ति और विकास
2.4.4 देवनागरी लिपि की विशेषताएँ
2.4.5 देवनागरी लिपि का मानकीकरण
2.4.6 सारांश
2.4.7 लघु प्रश्न

2.4.1 उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ में देवनागरी लिपि से संबंधित विस्तृत जानकारी दी जा रही है। देवनागरी लिपि की उत्पत्ति और विकास, लिपि की विशेषताएँ लिपि का मानकीकरण इत्यादि सभी विषयों पर विस्तृत ढंग से प्रकाश डाला गया है।

2.4.2 प्रस्तावना :

मानव–जीवन में भाषा का अत्यन्त महत्व है। भाषा का वर्णमाला एवं लिपि से घनिष्ठ संबंध है। प्रत्येक भाषा के लिए एक पृथक वर्णमाला आवश्यक होती है। डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया के अनुसार ''वर्णमाला के पश्चात् उन ध्वनियों को सांकेतिक चिन्हों में लिपिबद्ध किया जाता है– इस सांकेतिक चिन्ह विशेष की ही संज्ञा लिपि है।'' लिपि शब्द 'लिप्यते' से निकला है, जिसके अनेक अर्थ हैं–लिंपन करना, लेप देना आदि। जब मनुष्य की शाब्दिक अभिव्यक्ति को सांकेतिक चिन्हों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए, उन चिन्हों में उसका अर्थलींपन किया जाता है तब लिपि का जन्म होता है। किसी भी भाषा की समृद्धि में लिपि का योग सर्वाधिक होता है। इस विचार को ध्यान में रखते हुए भारत की राजभाषा हिन्दी की सर्वस्वीकृत लिपि देवनागरी का अध्ययन एवं विश्लेषण आवश्यक हो जाता है।

2.4.3 देवनागरी लिपि : उत्पत्ति और विकास :

भारत की प्राचीन लिपियों में तीन लिपियाँ प्रमुख हैं–

1. सिन्धुघाटी की लिपि :

सिन्धुघाटी की लिपि कुछ चित्राक्षर थी और कुछ ध्वन्याक्षर। सन् 400 ई. पू. से पहले इस लिपि का व्यवहार भारत के उत्तर–पश्चिमी प्रदेश में होता था।

2. खरोष्ठी लिपि :

खरोष्ठी लिपि का प्रचलन पश्चिमोत्तर भारत में एक हजार वर्ष तक रहा। इसमें सबसे प्राचीन अभिलेख सम्राट् अशोक के मिलते हैं। इस लिपि की विशेषता यह है कि यह दाएँ से बाएँ लिखी जाती है।

इन दोनों लिपियों से देवनागरी लिपि का कोई सीधा संबंध नहीं है।

3. ब्राह्मी लिपि :

यह पूर्णतया भारतीय लिपि है। प्रमाणों से जान पड़ता है कि ब्राह्म लिपि अधिक व्यापक और प्राचीन काल से व्यवहृत रही है। बताया गया है कि इसका विकास वैदिककाल की किसी लिपि से हुआ है। लिपि विज्ञान के विशेषज्ञ डॉ. राजबली पाण्डेय का मत है कि ब्राह्मी लिपि का आविष्कार ब्रह्मा या वेद की रक्षा के लिए हुआ था।'' ब्राह्मी की वर्णमाला में वैदिक ध्वनियों के पूरे प्रतीक विद्यमान हैं। ब्राह्मी के बहुत से अक्षर सिन्धुघाटी के लिपि से मिलते जुलते हैं।

विकास की दृष्टि से ब्राह्मी लिपि को तीन कालों में विभाजित किया जा सकता है –

1. प्रागैतिहासिक काल – वैदिक युग से छठी शती ई. पू. तक।
2. बौद्धकाल – इस काल में ब्राह्मी के अक्षर गोल आकार लेने लगे थे।
3. गुप्तकाल – गुप्तकाल में ही ब्राह्मी लिपि आधुनिक लिपियों में विकसित हुई है।

350 ई. तक गुप्तकाल में ही ब्राह्मी के स्वरूप में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। ब्राह्मी के दो भेद या दो शौलियाँ हो गई थीं–

1. **उत्तरीशैली** - उत्तरी शैली का प्रचार प्रमुखतः उत्तर भारत में था। ब्राह्मी की उत्तरी शैली से देवनागरी, गुजराती, बंगाली, असामी, उड़िया, कश्मीरी और गुरुमुखी लिपियाँ निकली हैं।
2. **दक्षिणी शैली** - दक्षिणी शैली दक्षिण भारत में व्यवहृत होती थी। इस शैली से तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ की लिपियाँ बनी हैं।

उत्तरी ब्राह्मी का नाम गुप्त लिपि भी है। गुप्त लिपि से सातवीं शती में कुटिल लिपि का विकास हुआ। कुटिल लिपि से उत्तर भारत की बहुत सी लिपियों का विकास हुआ जिनमें एक देवनागरी लिपि भी है।

देवनागरी नामकरण - इस लिपि का नाम देवनागरी क्यों पड़ा, इसका कोई निश्चित उत्तर नहीं मिलता केवल कुछ अनुमान किए जाते हैं–

1. यह लिपि नगरों में प्रचलित थी, अतः नागरी नाम पड़ा।
2. गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने से इसका नाम नागरी पड़ा।
3. देवभाषा संस्कृत में इसका प्रयोग होने से इसके साथ 'देव' शब्द जुड़ गया।
4. श्री राम शास्त्री के अनुसार देवताओं की उपासना के लिए जो संकेत बनाए जाते थे, उन्हें देवनगर कहते थे। वे संकेत लिपि के समान थे। वहीं से देव नागरी नाम चला।

5. एक मत यह भी है कि देवनगर (काशी) में प्रचार होने के कारण इसे देवनागरी कहा गया। पुष्ट प्रमाणों के अभाव में कोई भी प्रामाणिक नहीं है। सभी मतों में कल्पना ही कल्पना है।

2.4.4 देवनागरी लिपि की विशेषताएँ :

देवनागरी लिपि का अस्तित्व दसवीं–ग्यारहवीं सदी से निश्चय पूर्वक प्रमाणित होने लगता है। सन् 1017 ई. में महमूद गजनवी के चाँदी के सिक्के में यह वाक्य खुदा हुआ है–''अव्यक्त मेंव्यं मुहम्मद अवतार नृपति महमूद।'' शनैः शनैः इस लिपि में सुधार होता गया और सुधार के साथ प्रचार भी होता गया। आजादी के बाद इसे राष्ट्रपति के पद पर प्रतिष्ठित किया गया। किन्तु विरोधी स्वर भी निर्बल नहीं थे। आवश्यकता यह है कि इस लिपि की विशिष्टताओं और न्यूनताओं पर विचार करते हुए इसकी उपयोगिता का मूल्यांकन किया जाय। देवनागरी लिपि की विशेषताएँ या गुण इस प्रकार है :–

1. वैज्ञानिकता :

देवनागरी की वर्णमाला का क्रम वैज्ञानिक है, जैसे–स्वर पहले और वह भी ह्रस्व और दीर्घ क्रम से, बाद में व्यंजन। व्यंजन भी उच्चारण स्थान तथा प्रयत्न के अनुसार कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य आदि के रूप में है, व्यंजन वर्णमाला में भी पहले दो अघोष व्यंजन (क, ख, च, छ आदि) फिर दो सघोष (ग, घ, ज, झ आदि) और पाँचवाँ वर्ण अनुनासिक है। इसी प्रकार क वर्ग आदि पाँचों वर्गों के दूसरा और चौथा वर्ण (ख, घ, आदि) महाप्राण है और पहला तथा तीसरा (क, ग आदि) अल्पप्राण हैं। वर्णों की ऐसी वैज्ञानिक व्यवस्था विश्व की किसी भी भाषा में नहीं है।

देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता के और भी कारण हैं

(क) एक ध्वनि के लिए एक ध्वनिचिन्ह

इस दृष्टि से उर्दू और रोमन लिपि की अपेक्षा देवनागरी नितांत वैज्ञानिक है। प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र चिन्ह है। जैसे–'इ' के लिए सर्वत्र एक ध्वनिचिन्ह 'इ' है जबकि अंग्रेजी में 'इ' के अनेक ध्वनिचिन्ह हैं, जैसे–i, y, e, a, ie, u, ee, व उदाहरण के लिए symbol, three आदि। Examination में ti का उच्चारण 'श' होता है। उर्दू में 'आलू बुखारे' को 'उल्लू बेचारे' बन जाना पड़ता है।

(ख) एक ध्वनि चिन्ह से एक ही ध्वनि का बोध :

यह नागरी की प्रमुख विशेषता है। जैसे नागरी में 'क' ध्वनि सर्वत्र 'क' का बोधक है। इसके विपरीत रोमन लिपि में श्ब्श शबद कहीं 'क' का और 'स्' का परिचायक है। उर्दू में अलिफ से ही अ, आ, इ, ई, ए, ऐ को प्रकट किया जाता है। देवनागरी में यह अराजकता नहीं है।

(ग) ध्वनियों का पूर्णता :

देवनागरी में प्रत्येक अक्षर उच्चरित होता है। अंग्रेजी में कई शब्दों में अक्षर मूक हैं। जैसे – Half में I, Knife में K, psychology में p। ऐसे मूक वर्ण देवनागरी में नहीं हैं।

(घ) ह्रस्व तथा दीर्घ की स्पष्टता :

यह नागरी की निजी विशेषता है। इसमें ह्रस्व 'इ' और दीर्घ 'ई' में स्पष्ट भेद है पर अंग्रेजी में दोनों ध्वनियो

के लिए आई (I) से ही काम चला लेते हैं। जैसे निब (Nib) में 'i' ह्रस्व है और 'machine' में 'i' दीर्घ है।

(ङ) स्पष्टता :

जल्दीबाजी में लिखे जाने पर रोमन और उर्दू लिपि में अस्पष्टता आ जाती है किन्तु नागरी में पूर्णतः स्पष्टता है। इस प्रकार देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता में कोई संदेह नहीं है। इस लिपि की वैज्ञानिकता से मुग्ध होकर डेविड डिरंगर ने लिखा है–

Devanagri is one of the most perfect systems of writing.

सर विलियम जोन्स ने भी इसकी प्रशंसा की है–

Deonagri is more naturally Arranged than Any other.

परन्तु इसमें कतिपय न्यूनताएँ भी है। डॉ. भोलानाथ तिवारी लिखते हैं ''वैज्ञानिक लिपिचिन्ह लेखन में उसी क्रम से आने चाहिए, जिस क्रम से उच्चारण हो। जैसे अनुस्वार का स्थान अवैज्ञानिक है, उसे बाद में आना चाहिए, जबकि वह ऊपर लगाया जाता है–चंद्र, अंक आदि। 'इ' की मात्रा भी अवैज्ञानिक है। कहीं–कहीं इसका प्रयोग कई ध्वनियों के पूर्व होता है और उच्चारण बाद में होता है, जैसे 'चन्द्रिका'।

किन्तु इससे देवनागरी की वैज्ञानिकता पर आघात नहीं पहुँचता। विश्व की कोई भी लिपि सर्वथा निर्दोष नहीं हो सकती। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है–''देवनागरी वर्णमाला संस्कृत ध्वनियों के वैज्ञानिक क्रम के आधार पर है। इस दृष्टि से यह अत्यन्त वैज्ञानिक लिपि मानी जाती है।''

वैज्ञानिकता के अतिरिक्त नागरी की अन्य विशेषताएँ–

2. नागरी लिपि आक्षरिक है :

नागरी लिपि, रोमन की भांति वर्णात्मक न होकर आक्षरिक है। आक्षरिक लिपि में प्रत्येक व्यंजन के साथ स्वर संयुक्त होता है तथा स्वर के अभाव की सूचना 'हल' लगाकर दी जाती है। इस लिपि में स्थान कम लगता है, पर ध्वनियों के वैज्ञानिक विश्लेषण में कुछ असुविधा होती है। आक्षरिक लिपि में वर्ण पर मात्राएँ चतुर्दिक लगती हैं। रोमन में केवल आगे ही बढ़ा जा सकता है। नागरी का यह विशिष्ट गुण यांत्रिक कसौटी पर अवगुण माना जाता है। इसलिए डॉ. चाटुर्ज्या आदि भाषाविद् नागरी की वर्णमाला को रोमन पद्धति में लिखने पर बल देते रहे हैं।

3. एक ध्वनि निष्ठ वर्णों का होना :

यह भी नागरी की एक उल्लेखनीय विशेषता है। प्रत्येक वर्ण में केवल एक ध्वनि समाहित है। रोमन के W (डब्लू) में पाँच ध्वनियाँ हैं लेकिन इस वर्ण का व्यवहार केवल 'व' ध्वनि के लिए होता है। उर्दू की लिपि में भी यह अराजकता दृष्टव्य है। अरबी का 'अलिफ' चार ध्वनियों से संयुक्त है, परन्तु बोध केवल 'अ' का होता है। नागरी लिपि में 'क' का उच्चारण और उसका व्यवहार एक सा ही है, उसमें अन्तर नहीं है।

4. सरलता एवं सुन्दरता :

वैसे तो सरलता और सुन्दरता सापेक्षिक तत्व हैं। फिर भी नागरी लिपि के वर्णों की आकृतियों की सरलता एवं सुन्दरता से इनकार नहीं किया जा सकता। आदर्श लिपि में सुन्दरता का गुण होना ही चाहिए।

5. यांत्रिक सुविधा :

मुद्रण और टंकण की दृष्टि से भी नागरी लिपि में सुविधा एवं सरलता है।

6. आशुलेखन :

वर्तमान वैज्ञानिक युग की आवश्यकता है कि आदर्श लिपि में आशुलेखन की अधिक क्षमता हो।

7. व्यापकता :

देवनागरी लिपि का प्रयोग बहुत व्यापक है। संस्कृत, नेपाली, हिन्दी, मराठी की तो एकमात्र लिपि है, परन्तु पंजाबी एवं गुजराती के लिए भी इसका प्रयोग होता है।

8. सुलभता :

यह लिपि भारत की अनेक लिपियों के निकट है, इसलिए सबको सुलभ है। इसी से हमारे नेता कहते आ रहे हैं कि यदि भारत की भाषाओं की एक लिपि हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है। भावात्मक एकता के लिए तथा नाना भाषाओं को सीखने के लिए यह आवश्यक भी है।

दोष :

कोई भी लिपि नितात निर्दोष नहीं होती इसलिए नागरी लिपि में इन विशेषताओं के साथ कुछ कमियाँ भी हैं :–

1. 'इ' की मात्रा वर्ण से पूर्व लगना अवैज्ञानिक है।
2. हलन्त 'र' को अनेक प्रकार से लिखा जाता है।
3. अ, ण, ल को दो प्रकार से लिखा जाता है।
4. ख–ख, ध–ध, भ–भ आदि में स्पष्ट अन्तर नहीं है।
5. संयुक्त वर्णों को लिखने में कठिनाई होती है।
6. उर्दू की क, ख, ग, ज, फ ध्वनियो का अभाव है।
7. देवनागरी आक्षरिक है, वर्णनात्मक नहीं।
8. देवनागरी लिखावट में जटिल है।
9. त्वरालेखन के लिए यह लिपि उपयुक्त नहीं है।
10. मुद्रण में गति नहीं है। रोमन लिपि में गति है।
11. हिन्दी में ऋ, ङ, ञ अथवा ष की अब कोई आवश्यकता नहीं है।

इसमें से कुछ न्यूनताओं का निराकरण किया गया है। शेष न्यूनताओं का भी निराकरण अपेक्षित है।

2.4.5 देवनागरी लिपि का मानकीकरण :

देवनागरी लिपि में अनेक समस्याएँ हैं जिनका निराकरण करने का प्रयास किया गया है। शिक्षा मंत्रालय

ने इस दिशा में कई स्तरों पर प्रयास किया है। सन् 1966 में 'मानक देवनागरी वर्णमाला' प्रकाशित की गई। इसके अनुसार देवनागरी के जो वर्ण एक से अधिक रूपों में लिखे जाते थे, उनके स्थान पर प्रत्येक वर्ण का मानक रूप निर्धारित किया गया है। लिपि की समस्या वर्तनी से और वर्तनी की भाषा के मानकीकरण की समस्या से जुड़ी हुई है। शिक्षा मंत्रालय ने कई भाषाविदों के सहयोग से वर्तनी की विभिन्न समस्याओं पर विचार करने के बाद 1967 में 'हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण' नामक पुस्तिका प्रकाशित की। बाद में इनके सुझावों पर विस्तृत चर्चा होती रही, जिसमें भाषाविदों, लेखकों, पत्रकारों और हिन्दी सेवी संस्थाओं ने भाग लिया। 1983 में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की ओर से 'देवनागरी लिपि तथा हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण' का प्रकाशन हुआ। इसके सुझावों को संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है–

1. देवनागरी वर्णमाला तथा अंकों का स्वरूप

स्वर – अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ औ,

अनुस्वार – (अं)

अनुनासिक – ँ

विसर्ग – : (अः)

व्यंजन –	क ख ग घ ङ	च छ ज झ ञ
	ट ठ ड ढ ण	त थ द ध न
	प फ ब भ म	य र ल व
	श ष स ह	

परम्परागत संयुक्त व्यंजन	–	क्ष, त्र, ज्ञ, श्र
हल चिन्ह	–	(ड्)
गृहीत वर्ण	–	ऑ, ख़, ज़, फ़
देवनागरी अंक	–	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, ०
अन्तर्राष्ट्रीय अंक	–	1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

संविधान के अनुसार संघ के राजकार्य के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग होगा, परन्तु राष्ट्रपति संघ के किसी भी राजकीय प्रयोजन के लिए भारतीय अंकों के देवनागरी रूप प्रयोग को भी प्राधिकृत कर सकते हैं।

2. संयुक्त वर्ण

(क) खड़ी पाई जाने वाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाना चाहिए, जैसे–

ख् + य = ख्य (व्याख्या) ग् + ध = ग्ध (मुग्ध)

घ् + न = घ्न (कृतघ्न) च् + छ = च्छ (अच्छा)

ज् + य = ज्य (राज्य) ण् + य = ण्य (पुण्य)

त् + य = त्य (सत्य)

त् + र = त्र और त्र दोनों रूप मान्य है।

इसी प्रकार अन्य संयुक्त व्यंजनों की खड़ी पाई हटा दी जाय।

श् का र के साथ संयोग श्र होगा। जैसे श्री, श्रुति, श्रम।

(ख) क और फ् के अन्त का अंकुड़ा हटा दें।

जैसे – क् + ख = क्ख (मक्खन)

फ् + त = फ्त (दफ्तर)

(ग) 'र' पहला व्यंजन हो, तो उसके लिए रेफ ही होना चाहिए।

जैसे–धर्म, आर्य, कर्ता

(रेफ अगले व्यंजन के ऊपर होगा, और यदि उस व्यंजन के बाद कोई मात्रा होगी तो उस मात्रा के ऊपर डाला जायेगा जैसे–धर्म, वार्ता, विद्यार्थी।

(घ) 'र' दूसरा अर्थात् पूरा व्यंजन होगा तो पाई के साथ न होगा जैसे–प्रकार, क्रम, ग्राम, स्त्रोत और पाई न हो तो छ्र, ट्र, ड्र, द्र, ह्म – ये दो रूप होंगे जैसे–कृच्छ्र, ट्राम, ड्रामा, विद्या, ब्रह्म'

3. अनुस्वार और अनुनासिक :

(क) अनुस्वार (बिंदी) और अनुनासिक चिन्ह (चन्द्रबिन्दु) दोनों का प्रयोग होना चाहिए। जहाँ पंचमाक्षर (ङ, ञ, ण, न्, म्) संयुक्त व्यंजन में आता हो, वहाँ एकरूपता और मुद्रण–लेखन की सुविधा के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग होना चाहिए जैसे –गंगा, चंचल, ठंडा, संध्या, संपादक। परन्तु जहाँ पंचमाक्षर का संयोग अपने वर्ग के पहले चार व्यंजनों से भिन्न व्यंजन के साथ हो रहा हो, तो वहाँ पंचमाक्षर ही होगा, अनुस्वार अर्थात् बिन्दी नहीं। जैसे – वाङ्मय, अन्य, अन्न, उन्मत।

(ख) चन्द्रबिन्दु के बिना अर्थ में भ्रम की गुंजाईश रहती है जैसे–अनुस्वार व्यंजन का गुण है वैसे अनुनासिक स्वर का गुण है, अतएव चंद्रबिन्दु का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। जैसे – हँसना, मुँह, लाँघना, मूँदना, सँवारना।

जहाँ शिरोरेखा के ऊपर मात्रा आती हो, वहाँ अनुस्वार लगाना चाहिए, क्योंकि मात्रा के साथ चन्द्र बिन्दु लगाने में छपाई में कठिनाई होती है जैसे–नहीं, जोंक, में।

4. विदेशी ध्वनियाँ :

(क) डॉक्टर, फार्म, पॉकेट आदि में ऑ के ऊपर अर्धचन्द्र लगाना चाहिए।

(ख) अंग्रेजी और फारसी दोनों भाषाओं में नुक्ता वाले ज फ का प्रयोग करना चाहिए। जैसे– फेल, फारसी, फजल, जोर, जीरो, फौरन, फोटो आदि।

क) ग् का उच्चारण हिन्दी में क ग हो गया है, इसलिए इनके नीचे नुक्ता लगाने की आवश्यकता नहीं है।

ख) हिन्दी में लगभग ख हो गया है किन्तु जो शुद्धता का ख्याल रखना चाहे वे ख का प्रयोग कर सकते हैं।

5. भारत की अन्य भाषाओं की ध्वनियाँ :

हिन्दी सार्वदेशिक भाषा तभी हो सकती है, जब उसमें अन्य भारतीय भाषाओं की विशिष्ट ध्वनियों को भी स्थान दिया जाये। इन भाषाओं का सही–सही लिप्यन्तरण करने के लिए निम्नलिखित चिन्ह देवनागरी में जोड़े गए हैं–

कश्मीरी – ॲ ऑ उ ऊ, छ ज

सिन्धी – ग ज ड ब।

बंगला असमिया – य

दक्षिण भारतीय – र, ळ, ळ, ष न

उर्दू – अ जैसे – अिवादत, आदत

6. विराम चिन्ह

विराम चिन्ह ये हैं – ! , ; ? ! : – = ।

(क) अंग्रेजी का फुटस्टाप (.) ग्रहण नहीं किया जाएगा। खड़ी पाई ही पूर्ण विराम का चिन्ह है। परन्तु आजकल पत्र–पत्रिकाओं में (.) का प्रयोग हो रहा है।

7. ऐ, औ की मात्रा

ऐ, औ (मात्राएँ ै ौ) दो–दो ध्वनियों के संकेत हैं। यही चलें, संशोधन की कोई आवश्यकता नहीं है, जैसे–मैया, भैया, कौवा।

8. विसर्ग का प्रयोग

संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है, उन तत्सम् शब्दों में विसर्ग अवश्य रहना चाहिए। जैसे – दुःख। किन्तु तद्भव में नहीं, जैसे दुखिया।

9. हल का प्रयोग

संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दों में जहाँ हल चिन्ह होता है, वहाँ रहना चाहिए। किन्तु जहाँ व्यवहार में उसे लुप्त कर दिया गया है। वहां हल् की जरूरत नहीं है जैसे–जगत, महान, भगवान, विद्वान।

10. हाइफन या योजक चिन्ह का प्रयोग

हाइफन का प्रयोग स्पष्टता के लिए किया जाता है।

(क) द्वन्द्व समास में पदों के बीच में योजक चिन्ह रखा जाए, जैसे – माँ–बाप, रात–दिन, देख–रेख।

(ख) बहुव्रीहि समास में हाइफन बिल्कुल नहीं लगाना चाहिए। जैसे घनश्याम, सिरफिरा, चन्द्रशेखर।

(ग) सामान्यतः तत्पुरुष में हाइफन की आवश्यकता नहीं है। जैसे–रामराज्य, गंगाजल, आत्महत्या।

(घ) कठिन संधि से बचने के लिए भी हाइफन का प्रयोग किया जाता है। जैसे–द्वि–अर्थक, स्त्री–उपयोगी।

11. परसर्ग या कारक चिन्ह का प्रयोग :

(क) हिन्दी के कारक चिन्ह या परसर्ग संज्ञा शब्दों के साथ सटाकर नहीं, अलग लिखने चाहिए और सर्वनामों के साथ सटाकर लिखें, जैसे–संज्ञा शब्द – बालक ने, पिता ने, बच्चे से। सर्वनाम शब्द – उसका, मैंने तुमको।

(ख) सर्वनाम के साथ यदि दो परसर्ग आएँ तो दूसरे को काटकर अलग किया जाय। जैसे–उनमें से, उसके लिए।

(ग) यदि सर्वनाम के तुरंत बाद 'ही' या 'तक' आदि का निपात हो, तो परसर्ग पृथक् हो जाएगा। जैसे – उन तक में, आप ही के लिए।

2.4.6 सारांश :

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि लिपि का मानकीकरण एक समस्या तो है किन्तु बहुत बड़ी समस्या नहीं है। यदि अध्यापक ध्यान दें और प्रेस केवल निर्धारित चिन्हों का प्रयोग करें तो निकट भविष्य में ही देवनागरी का मानकीकृत रूप स्थिर हो जाएगा। एक बात और मानकीकरण से एकरूपता तो आती है किंतु लिपि और उसके साथ भाषा का प्रवाह रुक जाता है। शैलीगत स्वतंत्रता नहीं रहती।

2.4.7 लघु प्रश्न :

1. भारत की तीन प्राचीन लिपियाँ कौन–सी हैं?
2. देवनागरी लिपि का यह नाम क्यों पड़ा?
3. देवनागरी लिपि की प्रमुख विशेषताएँ कौन–सी हैं?
4. देवनागरी लिपि के मानकीकरण से आप क्या अर्थ लेते हैं?